[illegible]

धुमकुड़िया : आदिवासी समाज की आरंभिक सामाजिक पाठशाला

DHMKURIYA : A Pre School of Tribal Society

Research & Coordination

Dr. Narayan Oraon 'Sainda'

प्रकाशक :

अद्दी कुँड़ुख़ चाःला धुमकुड़िया पड़हा अखड़ा (अद्दी अखड़ा),

तोलोंग पिण्डा, बोड़ेया रोड, नगड़ा डिप्पा, चिरौन्दी, राँची, झारखण्ड, पिन-834006

In Association with

TRIBAL CULTURAL SOCIETY, JAMSHEDPUR

An Ethnicity Wing of TATA STEEL FOUNDATION

धुमकुड़िया : आदिवासी समाज की आरंभिक सामाजिक पाठशाला

DHMKURIYA : A Pre School of Tribal Society

प्रथम संस्करण : फरवरी 2024

प्रतियाँ : 2000 (दो हजार)

Research & Coordination

Dr. Narayan Oraon 'Sainda'

Publication © :

Addi Akhra, Ranchi, Jharkhand

Editorial Board :-

1. Dr. Narayan Oraon
2. Dr. Bindu Pahan
3. Dr. Narayan Bhagat
4 Dr. Ramkishor Bhagat
5. Dr. (Smt.) Jyoti Toppo
6. Dr. (Smt,) Shanti Xalxo
7. Fr. Augustin Kerketta
8. Shri Saran Oraon
9. Shri Ranthu Oraon
10. Shri Bipta Oraon
11. Shi Mahadeo Toppo
12. Shri Kislay Jee

प्रकाशक :

अद्दी कुँडुख़ चाःला धुमकुड़िया पड़हा अखड़ा (अद्दी अखड़ा),

तोलोंग पिण्डा, बोड़ेया रोड, नगड़ा डिप्पा, चिरौन्दी, राँची, झारखण्ड, पिन-834006

In Association with

TRIBAL CULTURAL SOCIETY, JAMSHEDPUR

An Ethnicity Wing of TATA STEEL FOUNDATION

विषय सूची

1. पुन्दचका कत्था (प्रस्तावना) प्राक्कथन – 04
2. प्राक्कथन – 05
3. झारखण्ड आंदोलनकारियों की नजर में : अलग प्रांत आन्दोलन की उपलब्धि है तोलोंग सिकि – 06
4. धरमे ओहमा – 07
5. मातृभाषा : माँ के जुबान की भाषा – 08
6. राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 एवं मातृभाषा शिक्षा – 09
7. राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 एवं मातृभाषा शिक्षा एवं धुमकुड़िया पर तीन दिवसीय कार्यशाला – 12
8. राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 एवं मातृभाषा शिक्षा में धुमकुड़िया की प्रासंगिकता – 13
9. धुमकुड़िया (एक पारम्परिक सामाजिक पाठशाला सह कौशल विकास केन्द्र) – 14
10. धुमकुड़िया कोरना उल्ला माघ पुनई नू – 28
11. पेल्लो एड़पा महबा उल्ला (किशोरी गौरव दिवस) – 31
12. कुँड़ुख़ तोलोङ सिकि तोड़पाब (वर्णमाला) – 41
13. कुँड़ुख़ तोलोंग सिकि (लिपि) का मूल आधार है आदिवासी जीवन–दर्शन – 42
14. कुँड़ुख़ तोलोंग सिकि (लिपि) का आधार – 43
15. नई लिपि की परिकल्पना एवं लिपि विकास का महत्वपूर्ण घटनाक्रम – 44
16. 26 जुलाई 1996 में तोलोङ सिकि पर भाषाविद डॉ० फ्रांसिस एक्का से ध्वनि विज्ञान पर दिशा–निर्देश – 53
17. 3 से 5 जवनरी 1997 में तोलोङ सिकि पर समाजसेवी पड़हा देवान श्री भिखराम भगत का सुझाव – 54
18. अनेकानेक शिक्षाविद एवं समाजसेवियों का तोलोंग सिकि लिपि के विकास में मार्गदर्शन प्राप्त – 56
19. ग्राफ्रिक्स ऑफ तोलोङ सिकि पुस्तक लोकार्पण एवं डॉ० रामदयाल मुण्डा का संशोधन हेतु मार्गदर्शन – 57
20. नई लिपि के वैज्ञानिक गुण संबंधी विचार भाषाविद डॉ० भोलानाथ तिवारी (साभार : भाषा विज्ञान) – 60
21. नई लिपि, सामाजिक सह सांस्कृतिक आधार वाली हो तथा तकनीकी संगत हो (आदिवासी शिक्षाविद) – 62
22. वर्ष 1998 में बिहार जनजातीय कल्याण शोध संस्थान, राँची में कुँड़ुख़ भाषा–लिपि संबंधी विशेष कार्यशाला – 63
23. तोलोङ सिकि लिपि 15 मई 1999 ई0 को जनमानस के व्यवहार के लिए जारी – 64
24. तोलोङ सिकि के संबंध में भाषाविदों एवं शिक्षाविदों के विचार – 65
25. तोलोङ सिकि वर्णमाला का साहित्यिक विवेचना – 71
26. कुँड़ुख़ भाषा एवं तोलोंग सिकि (लिपि) के संबंध में सरकारी एवं विभागीय अधिसूचना – 72
27. महादेव टोप्पो की कविता : धुमकुड़िया नू बिल्ली दगआ लगदम – 85
28. धुमकुड़िया, सैन्दा, सिसई, गुमला, झारखण्ड के नवजागरण की झाँकी – 88
29. धुमकुड़िया कोरना उल्ला क्या है ? – 92
30. उराँव आदिवासी परम्परा में अध्यात्मिक अवधारणा – 95
31. उराँव (कुँड़ुख़) सामाजिक परम्परा में धर्म की मान्यता – 99
32. तोलोङ सिकि की विकास यात्रा और राःजी पड़हा, भारत – 102
33 तोलोङ सिकि का कंप्यूटरी अवतार 'केलि तोलोङ' की उद्‌भव यात्रा – 104
34. टाटा स्टील फाउण्डेशन द्वारा संपोषित कुँड़ुख़ भाषा–तोलोंग सिकि शिक्षण केन्द्र का झलक – 105
35. टाटा स्टील फाउण्डेशन, जमशेदपुर द्वारा कुँड़ुख़ भाषा तोलोंग सिकि (लिपि) प्रशिक्षण – 110
36. DEVELOPMENT OF TOLONG SIKI DISPLAY SYSTEM & IT'S USES – 112
37. संस्कृत–हिन्दी शब्दों को तोलोंग सिकि में लिप्यन्तरण हेतु मानकीकरण – 115
38. कुँड़ुख़ बाल कविताएँ, मुहावरा, कहावत, पहेलियाँ – 121
39. कुंड़ुख़ लेक्खा (गिनती) – 137
40. अड्‌डा मुल्ली – 139
41. धुमकुड़िया पड़हरा डण्डी – 140
42. धुमकुड़िया कुँड़ुख़ गिनती – 141
43. पारम्परिक धुमकुड़िया की समर्थक संस्थाएँ एवं उनका उद्‌गार – 142
44. नया लिपि, आदिवासी समाज और संस्कृति कर प्रतिनिधित्व करेक चाही – 143
45. झारखण्ड सरकार, स्कूली शिक्षा एवं साक्षरता विभाग का संकल्प पत्र – 144
46. कुँड़ुख़ भाषा–तोलोंग सिकि विषयक, विभागीय एवं राजकीय सम्मान – 148
47. प्रधानमंत्री मोदी ने 108वें मन की बात में ग्राम मंगलो, गुमला निवासी अरविन्द उराँव की प्रशंसा की – 149
48. नया लिपि, आदिवासी समाज और संस्कृति कर प्रतिनिधित्व करेक चाही – 150
49. कम्प्यूटर में तोलोङ सिकि (लिपि) टाईप सीखने की आसान विधि – 151
50. अमर शहीद बीर बुधू भगत का आन्दोलन और उराँव समाज का पड़हा–धुमकुड़िया–अखड़ा – 152

1. पुन्दचका कत्था (प्रस्तावना)

पुरखर बाःचका रअ़नर – ''कुद्दोय होले बेद्दोय, ओक्कोय होले ख़क्खोय''।

एन्ने लेखम बाःचका रअ़ई – ''पद्दा–पद्दा मनर पड़हा मनी, पड़हा–पड़हा मनर पहटा अरा पड़हा–पहटा खोंड़ोरअर मनी राःजी अरा बेलख़ा। इबड़न अख़आ गे लेद्दे परिया तिम काःना मनी पद्दन्ता धुमकुड़िया।''

20वीं सदी के अंतिम दशक में झारखण्ड अलग प्रांत आंदोलन के विचारक एवं वरिष्ठ नेता पद्मश्री डॉ० रामदयाल मुण्डा कहा करते थे – जब ले आदिवासी समाज कर धुमकुड़िया नी जागी अउर अख़ड़ा नी गहजी तब ले आदिवासी मनकर उबार नखे। एखन कर बेरा में अखड़ा जगन धुमकुड़िया होवे अउर धुमकुड़िया में किताब–कॉपी, पुस्तकालय संगे समाचार पत्र अउर छोटमोट सर्दी–बुखार कर टिकिया संगे–संग मरहम पट्टी कर सामान भी रहेक चाही।

21वीं सदी के आरंभ में भारत देश में ''अमृत महोत्सव'' मनाया जा रहा है। इस अवसर पर देश में राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 लागू कर दिया गया है। इसके तहत झारखण्ड सरकार ने वर्ष 2022 में, आदिवासी बहुल क्षेत्रों में मातृभाषा के माध्यम से प्राथमिक शिक्षा दिये जाने का अवसर प्रदान किया है। भाषा शिक्षा विषय में हिन्दी एवं अंगरेजी के अतिरिक्त झारखण्ड में कुँड़ुख़ (उराँव), मुण्डारी, खड़िया, हो, एवं संताली मातृभाषा में से क्षेत्रवार किसी एक से प्राथमिक शिक्षा प्रारंभ किये जाने हेतु अधिसूचना जारी हुआ है तथा 1ली से 3री कक्षा की पुस्तकें प्रकाशित हैं।

मातृभाषा में प्राथमिक शिक्षा का निर्णय, केन्द्र एवं राज्य सरकार की ओर से शिक्षा व्यवस्था का भारतीयकरण किया जाना तथा किसी समाज की भाषा–संस्कृति का संरक्षण और संवर्द्धन तथा रोजगार के अवसर के रूप में समझा जाना चाहिए। यह पाठ्यक्रम योजना 5+3+3+4 के रूप में प्रारूपित है। इसमें से प्रथम 5 को 3+2 के रूप में विस्तारित किया गया है। इन 5 में से पहला 3 वर्ष का समय, पूर्वशिक्षा या आरंभिक शिक्षा को सूचित करता है तथा बाद वाला 2 वर्ष, क्रमशः 1ली एवं 2री कक्षा का समय सूचक है। अर्थात अब अभिभावक अपने बच्चों को 3 वर्ष का उम्र पूरा करने के बाद सरकार द्वारा नियोजित पूर्वशिक्षा केन्द्र में भेजेंगे, जहाँ वे नर्सरी में 1वर्ष, एल.के.जी में 1 वर्ष तथा यू.के.जी में 1 वर्ष पूर्व शिक्षा केन्द्र भेजा करेंगे। इस तरह उक्त 5 बर्ष तक सरकार द्वारा प्रायोजित केन्द्र में बच्चा 2री कक्षा उतीर्ण करेगा। वर्तमान समय के ग्रामीण क्षेत्रों के अधिकतर विद्यालयों में पूर्व शिक्षा योजना हेतु 3 साल के बच्चे के लिए विशिष्ट स्कूली व्यवस्था नहीं है। तब इस नई व्यवस्था के अंतर्गत 4थे वर्ष से 6वर्ष के बच्चों को आंगनवाड़ी या शिक्षा वाटिका से जोड़ने की बात कही जा रही है। इस तरह यदि पूर्व शिक्षा योजना को आंगनवाड़ी से जो जोड़ा जाता है तो यह प्रश्न उठेगा कि क्या, सभी (कुँड़ुख़/उराँव बहुल क्षेत्र) क्षेत्र के आधे से अधिक आंगनवाड़ी सेविकाएँ कुँड़ुख़ (उराँव) भाषा या लिपि नहीं जानती है। क्या, समाज के लोग इस संबंध में कोई निर्णय ले पाएंगे! अब समाज को राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 एवं मातृभाषा शिक्षा योजना पर विस्तार पूर्वक विचार–विमर्श एवं निर्णय करने की आवश्यकता है।

ऐसी परिस्थिति में पारम्परिक सामाजिक पाठशाला सह कौशल विकास केन्द्र धुमकुड़िया का पुनर्जागरण, आदिवासी समाज की आवश्यकता है। प्राचीन काल में, यह गाँव का एक शिक्षण शाला सह कौशल विकास केन्द्र के रूप में हुआ करता था, जो गाँव के लोगों द्वारा ही चलाया जाता था। धुमकुड़िया से शिक्षित व्यक्ति जो मानव जीवन के लिए उपयोगी ज्ञान सीखे हुए को सुसंस्कृत एवं प्रशिक्षित (Trained Person) कहा जाता था। बच्चों को खेल–खेल में गाना–बजाना–नाचना सीखलाने के लिए बुजूर्ग या दादा–दादी अपने पोते–पोतियों को बच्चों को कहा करते हैं – गुचा नतिया, धुम ताअ़ बेःचा/लगे धुम ताअ़ बेःचा। दूसरे शब्दों में कहें कि – वह पद्धति या माहौल जहाँ बच्चे बचपन में खेल–खेल में गाना–बजाना–नाचना सीखा करते हैं। कुड़िया का अर्थ छोटा घर अथवा केन्द्र होता है। इस प्रकार – धुम्म ताअ़ + कुड़िया से धुमकुड़िया शब्द बना। ताअ़ शब्द खण्ड, प्रेरणार्थक क्रिया का मजही लटख़ु (मध्य प्रत्यय) है अथवा प्रेरणाश्रोत है। मांदर का बायाँ छोर, धुम्म का प्रतिनिधि तथा दायाँ किनारा ताअ़ का प्रतिनिधि है। इस तरह धुमकुड़िया वह है जहाँ बच्चे अपने आरंभिक जीवन में सामाजिक ज्ञान सीखते हुए कठिन रास्तों से गुजरकर अपने व्यक्तित्व में निखार लाते हैं तथा कुड़िया का अर्थ केन्द्र या छोटा घर होता है।

दिनांक : 24.02..2024 (माघ पुर्णिमा) – डॉ० नारायण उराँव, एम.जी.एम.मेडिकल कॉलेज अस्पताल, जमशेदपुर (झारखण्ड)

2. प्राक्कथन

15 नवम्बर 2000 को बिहार का पुनर्गठन करके झारखण्ड राज्य का गठन हुआ। इस राज्य क्षेत्र में कई विशिष्ट आदिवासी भाषा एवं संस्कृति विद्यमान है। झारखण्ड अलग राज्य गठन के औचित्य पर इन विशिष्ट आदिवासी भाषा एवं संस्कृति के संरक्षण तथा संवर्द्धन का उदेश्य भी सूचना जगत में सामने आता रहा है। आरंभिक नव गठित झारखण्ड में अनुसूचित जनजातियों की संख्या 30 थी। उस सूची में 2 जनजातीय समूह को केन्द्र सरकार द्वारा जोड़े जाने के बाद यह सूची विगत दो दशक तक 32 रही है। इन 32 में से 6 जनजातीय भाषा को झारखण्ड सरकार द्वारा द्वितीय राजकीय भाषा का दर्जा प्रदान किया गया है। साथ ही संताली, मुण्डारी, हो, खड़िया तथा कुड़ुख़ (उरांव) भाषा की पढ़ाई–लिखाई विश्वविद्यालय स्तर पर हो रही है। प्राथमिक स्तर पर पढ़ाई–लिखाई हेतु नई शिक्षा नीति 2020, लागू करते हुए राज्य सरकार द्वारा आरंभ किया गया है।

उपरोक्त विशिष्ट आदिवासी भाषा–संस्कृति–लिपि के संरक्षण तथा संवर्द्धन के उदेश्य से TATA STEEL FOUNDATION द्वारा विगत दशक में कोलहान क्षेत्र में कार्य किया जाता रहा था। अब इस योजना के तहत कोलहान के बाहर के क्षेत्र में भी कई सेन्टर चलाये जा रहे हैं। TATA STEEL FOUNDATION द्वारा अब 10 आदिवासी भाषाओं पर कार्य किया जा रहा है। इनमें कई Primitive Tribes की भाषा भी है।

आदिवासी भाषा–संस्कृति–लिपि के संरक्षण तथा संवर्द्धन के उदेश्य से ''एजेरना बेड़ा'' के नाम पर कुँड़ुख़ भाषा एवं झारखण्ड सरकार द्वारा मान्यता प्रदत लिपि तोलोंग सिकि की पढ़ाई–लिखाई करायी जा रही है। TATA STEEL FOUNDATION द्वारा संचालित ''एजेरना बेड़ा'' प्रोजेक्ट के साथ अद्दी कुंड़ुख़ चाःला धुमकुड़िया पड़हा अखड़ा, रांची एवं उरांव सरना समिति, चक्रधरपुर नामक दो संस्था सहयोगी बनकर कार्य कर रहे हैं। इस कार्य में वित्तीय वर्ष 2023–24 में कोलहान क्षेत्र के बाहर, लोहरदगा, गुमला, रांची, रोहतासगढ़ (बिहार), दक्षिण दिनाजपुर (पश्चिम बंगाल) आदि स्थानों पर भाषा शिक्षण केन्द्र चलाये जा रहे हैं। इन क्षेत्रों में भाषा शिक्षण केन्द्र के खुलने से लोगों में अपनी भाषा–संस्कृति–लिपि के संरक्षण तथा संवर्द्धन की दिशा में जागरूकता बढ़ रही हैं।

इधर TATA STEEL FOUNDATION के तकनीकी सहयोग से तीन दिवसीय कार्यशाला ''परम्परागत ग्रामसभा पड़हा बेलपंच्चा'' विषयक कार्यशाला सम्पन्न हुआ। इस कार्यशाला में अद्दी अखड़ा, राँची की सहकार्यता रही। कार्यशाला में 30 ग्रामसभा के कुँड़ुख़ भाषी प्रतिभागी उपस्थित रहे। इस कार्यशाला में परम्परागत उराँव समाज की रीति–नीति के संबंध में विचार–विमर्श हुआ, जो आने वाले समय में न्यायालय में उठ रहे विवाद का रास्ता बनेगा।

ज्ञातव्य है कि ''अद्दी कुँड़ुख़ चाःला धुमकुड़िया पड़हा अखड़ा, राँची'' (नि0 सं0 105/2013–14) द्वारा कुँड़ुख़ भाषा के विकास हेतु कार्य किया जा रहा है, जिसे TATA STEEL FOUNDATION सहयोग कर रही है। इस कड़ी में कई केन्द्रों में भाषा की पढ़ाई करायी जा रही है तथा पाठ्य सामग्री प्रकाशित कराये जा रहे हैं। पाठ्य सामग्री निर्माण में आदिवासी समाज के लोग आगे आ रहे हैं, जिसे सम्पादक मंडली द्वारा सम्पादित किया जा रहा है। इसके अतिरिक्त TATA STEEL FOUNDATION की ओर से अद्दी कुँड़ुख़ चाःला धुमकुड़िया पड़हा अखड़ा, राँची द्वारा तैयार किया गया Web Magazine, kurukhtimes.com को आगे ले जाने में सहयोग किया जा रहा है। अबतक TATA STEEL FOUNDATION कुँड़ुख़ में 1. अयंग कोंयछा 2. चींचो डण्डी अरा ख़ीरी 3 तोलेंग सिकि कुंड़ुख़ कत्थपून नामक तीन पुस्तकें तथा 4. तोलोंग सिकि वर्णमाला चार्ट प्रकाशित कराया गया है।

अंत में सम्पादक मण्डली एवं कुँड़ुख़ भाषा प्रेमियों को ''धुमकुड़िया : आदिवासी समाज की आरंभिक सामाजिक पाठशाला'' नामक इस पुस्तक के सफल प्रकाशन के लिए मैं हार्दिक बधाई एवं शुभकामनाएँ देता हूँ तथा उम्मीद करता हूं कि यह पुस्तक परम्परागत उराँव समाज में जनचेतना तथा जनजागरण की नवज्योति बनें।

JIREN XAVIER TOPNO
HEAD, TRIBAL IDENTITY
TATA STEEL FOUNDATION

Dated : February 28, 2024

3. आदिवासी भाषा–संस्कृति की वाहक एवं पोषक है धुमकुड़िया : आंदोलनकारी सेनानी

अपने देश भारत में कितना भी कोई अच्छे से अच्छा योजना बना ले, किन्तु विकास के लिए भाषा और लिपि का होना आवश्यक साधन है। क्योंकि भारत देश में मानवता को सामुदायिक आधार पर देखा जाता है। इसके आधार पर ही केन्द्र और राज्य सरकार में विकास का बजट तैयार किया जाता है। क्योंकि भारत देश की आबादी में सामुदायिक पहचान का स्थान अति महत्वपूर्ण है। इस महत्व को आज से 30–32 साल पूर्व हमलोग एक आदिवासी नेतृत्व कर्ता के रूप में समझ चुके थे। हमलोग अपने देश की जातिगत, भाषागत तथा भारतीय सामाजिक व्यवस्था के विषय में बातें समझ चुके थे। हम सभी आदिवासी भाषाओं तथा झारखण्ड के अन्य भाषाओं के मिटने की स्थिति पर काफी चिन्तन और चिन्ता करते थे। उन दिनों, इस प्रकार के भेदभाव, अपमानित करने वाले लोगों का प्रभूत्व था। इस सामाजिक बुराई से लड़ने हेतु एक बड़ी चुनौती थी, जिसको स्वीकार करने वालों में से कई लोगों ने कुँड़ूख भाषा के विकास की ओर कार्य आरम्भ किया। इस समय तक मुझमें, आदिवासी तथा मूलवासियों के बाल–बच्चों को पढ़ाई–लिखाई में आने वाली बाधाओं को समझ सकने की क्षमता बन चुकी थी और कॉलेज में दाखिला लेने के साथ ही मुझे छात्रगण, एक छात्र नेता के तौर पर स्थापित करने लगे थे। छात्र जीवन में आदिवासी कॉलेज छात्रावास में रहते हुए मेडिकल छात्र नारायण उराँव, मेरे एक खास साथी हुआ करते थे। मेडिको, नारायण उराँव में, समाज के प्रति गंभीर लगाव और समझ झलकता था और दरभंगा मेडिकल कॉलेज, लहेरियासराय (बिहार) से एम.बी.बी.एस. की डिग्री हासिल करते–करते अपना सामाजिक लगाव को प्रदर्शित करते हुए उन्होंने वर्ष 1989 में एक पुस्तक का प्रकाशन कराया। उस पुस्तक का नाम है – ''सरना समाज और उसका अस्तित्व।'' मैं भी इसे पढ़ा और डॉ.नारायण उराँव को बधाई दिया। एक आन्दोलनकारी छात्र नेता के रूप में, मैं डॉ० उराँव को सुझाव दिया – ''डॉक्टर, नीन ई पुथी नु ढेर बग्गे कत्थन दव कुना टूःड़का रअ़दय। पहें नीन निंगहय कत्थन हिन्दी भखा बाःचका रअ़दय, अवंगे ईद बग्गे उल्ला मल खेपओ। ईदिन नीन कुँड़ुख़ नु घोखआ अरा टूड़ा होले ईद बग्गे उल्ला गूटी थीर रअ़ओ।'' मेरा यह सुझाव, डॉ0 नारायण के मन में बैठ गया और वे कुँड़ुख़ में सोचने और लिखने लगे। शायद तोलोङ सिकि (लिपि) के विकास की नींव का प्रत्येक ईट इस घटना के बाद मजबूती से तैयार होने लगा था।

अलग राज्य आंदोलन के क्रम में हमलोग अपने साथियों के साथ नदी, पहाड़, झरना, गुफा आदि जगहों पर घुमते रहे कि शायद कहीं पर, पूर्वजों की लिपि मिल जाय, परन्तु हमलोग सफल नहीं हुए। आखिर, वह दिन भी आया या फिर ईश्वरीय कृपा हुई कि छुट्टियों में डॉ० नारायण उरॉव, अपने राँची प्रवास के दौरान आदिवासी कालेज छात्रावास, राँची पहुँचे। विचार–विमर्श के बाद मैंने, डॉ० नारायण से कहा – ''आप, एक डॉक्टर होकर मानव सेवा तो करेंगे ही, पर आपमें, आदिवासी भाषा, संस्कृति के प्रति अटूट आस्था एवं लगाव के साथ समझ है। यदि आप नई लिपि के विकास के क्षेत्र में कार्य कर सकते हो, तो आन्दोलन और समाज के लिए आपका अतुलनीय योगदान होगा। यह, समय और आन्दोलन की मांग है। सन् 1989–90 के आसपास ऐसी विचार धारा, एक आवश्यकता थी और आंदोलनकारियों की ओर से इस दिशा में डॉ० नारायण को आगे बढ़ने को कहा गया और वे इस काम में आगे बढ़ने लगे। थोड़ा सा सोच बनता और डॉ० नारायण मेरे साथ विचार–विमर्श करने के लिए आ जाया करते थे। इस तरह लिपि विकास का कार्य होता गया। आन्दोलनकारियों के निवेदन पर एक पत्रकार श्री गिरजा शंकर ओझा द्वारा नई लिपि, तोलोङ सिकि के संबंध में विस्तृत रिर्पोट तैयार किया गया, जो हिन्दी दैनिक 'आज' में दिनांक 07.10.1993 को छपा। धीरे–धीरे माहौल बनता गया एवं कार्य आगे बढ़ता गया और अब पठन–पाठन हो रहा है। वर्तमान में तोलोङ सिकि का कम्प्यूटर वर्जन यानि कम्प्यूटर फॉन्ट, वरिष्ट पत्रकार श्री किसलय जी के द्वारा विकसित किया गया है, जो kellytolong फोन्ट के नाम से निःशुल्क उपलब्ध है।

अंत में मैं ''धुमकुड़िया : आदिवासी समाज की एक आरंभिक सामाजिक पाठशाला'' नामक पुस्तक के सफल प्रकाशन हेतु डॉ० नारायण उराँव एवं उनक सभी साथियों को शुभकामनाएँ देता हूँ। आशा है, आने वाले समय में आदिवासी समाज के विकास में धुमकुड़िया एक सशक्त माध्यम बनेगा।

– माननीय विनोद कुमार भगत
पूर्व मंत्री (जैक) तथा झारखण्ड राज्य के निर्माणकर्ता तथा ऑल झारखण्ड स्टुडेन्ट यूनियन (आजसू) के संस्थापक सदस्य तथा झारखण्ड आन्दोलनकारी मोर्चा के अग्रणी संस्थापक।

वर्तमान पता – सिन्दवार टोली, न्यू ऐरिया
मोरहाबादी, रॉची (झारखण्ड), पिन : 834008,
दिनांक : 15 नवम्बर 2023

[illegible] / जय धरमे

[illegible]
जय धरमे

[illegible]
जय धरमे

[illegible]

अना उङ्गु, सँवसेन उङ्गु,
सिरज'उ–पो:स'उ, मयाननु धरमे उरबय,
धरती–अयंग, धरमी–सवंग, मयहदेव–परबईत,
चन्नदो–बी:ड़ी, चिच्च–चेंप, ता:का, मेरख़ा, चा:ला–अयंग,
देबी–अयंग, करम–देव, पुरखा–पचबल। अख़आ बल्ला, सुमरारआ लगदम, गोहरारआ लगदम, ओहारी ननके, मलदव ती बछाबअ़के, दव लूर–घोख चिअ़के दरा जिया–कया एंम्हयन सवंगिया कमअर, उ:ख़ा ती बिल्ली तरा होअ़नुम, धरम डहरेन धरताअ़के।
ओ'लग्गादम – ओ'लग्गी, ओ'लग्गी, ओ'लग्गी।

भावार्थ – हे सामर्थ्यवान, सर्वशक्तिवान, सृजनकर्ता–पालनकर्ता, दया करने वाले हमारे मालिक ईश्वर, धरती माय, ईश्वरीय शक्तियाँ, मयहदेव–परबईत, चांद–सूरज, अग्नि–वर्षा, हवा, आकाश, चा:ला माता, देबी माता, करम देव, पचबल पूर्वजगण। जाने अनजाने स्मरण कर रहे हैं, गुहार लगा रहे हैं, हमें छत्रछाया प्रदान करें, बुराई से बचाएं, अच्छाई का ज्ञान–समझ दें और हमारे आत्मा एवं शरीर को शक्ति प्रदान कर, अंधकार से प्रकाश की ओर ले जाते हुए, धर्म के रास्ते पर ले चलें। आप सबों को हमारा प्रणाम है – प्रणाम, प्रणाम, प्रणाम।

''मातृभाषा : माँ के जुबान की भाषा''

उपर फोटो में – दायें से राँची विश्वविद्यालय, राँची के कुलपति डॉ०एल०एन०भगत, विनोबा भावे विश्वविद्यालय,हजारीबाग के कुलपति डॉ०आर०एन०भगत, महामहीम राज्यपाल झारखण्ड डॉ० सैयद अहमद, महापौर राँची श्रीमती रमा खलखो।

''बच्चा जब जन्म लेता है तो उसकी कोई जुबान (भाषा) नहीं होती है। धीरे–धीरे वह अपनी माँ की जुबान सीखता है। उसके लिए वह अपना सबसे ताकतवर अंग, ओठ का इस्तेमाल करता है और ओठ के सटने से निकलने वाली ध्वनि पा, बा, मा इत्यादि का उच्चारण करता है। बच्चा अपनी माँ से जिस जुबान को सीखता है, वही उसके लिए माँ की भाषा अर्थात mother tongue होती है।'' (दिसम्बर 15, 2012 को अंतर्राष्ट्रीय कुँड़ुख़ भाषा सम्मेलन के मुख्य अतिथि, झारखण्ड के राज्यपाल डॉ० सैयद अहमद के सम्भाषण का अंश।)

फोटो – राजेन्द्र आयुर्विज्ञान संस्थान, राँची (झारखण्ड) में विभागाध्यक्ष नवजात एवं शिशु रोग विभाग सह नॉडल ऑफिसर,एस०सी०एन०यू० (Special Care Newborn Unit) का कार्यालय। बायें से – सिस्टर ज्योत्सना लकड़ा, डॉ० मिनी रानी अखौरी (एसोसिएट प्रोफेसर), डॉ० अरूण कुमार शर्मा (प्रोफेसर सह एच.ओ.डी. नवजात एवं शिशुरोग विभाग तथा नॉडल ऑफिसर एस.सी.एन.यू), एवं डॉ० नारायण उराँव।

नवजात एवं शिशु विशेषज्ञों का मानना है कि एक सामान्य बच्चा अपने माता–पिता के साथ रहते हुए, जब बोलना सीखता है, तो सर्वप्रथम, सबसे आसान एक आक्षरिक (Monosyllablic पा, बा, मा) शब्द, 6वें महीने में सीखता है। उसके बाद, 9वें महीने में द्वी आक्षरिक (पपा, बबा, ममा) शब्द एवं 1ले वर्ष में दो शब्द वाला अर्थ सहित सीखता है। प्राकृतिक रूप से बच्चा प वर्गीय शब्द से ही सीखना आरंभ करता है। वह इसलिए होता है कि जब बच्चा स्तनपान करता है तो उसके दोनों ओठ सक्रीय होते हैं और ओठ के सटने से उत्पन्न ध्वनि, सीखने में बच्चे के लिए आसान हो जाती है। एक शिशु चिकित्सक के रूप में डॉ० नारायण उराँव ने अपने साहित्यिक शोध में, एक आदिवासी भाषा की लिपि (तोलोंग सिकि) के वर्णमाला को स्थापित करने में इस सिद्धांत को आधार बनाया है, जो विशिष्ट एवं अद्‌भुत है।

– डॉ० अरूण कुमार शर्मा, प्रोफेसर एवं विभागाध्यक्ष, नवजात एवं शिशुरोग विभाग, रिम्स, राँची, दिनांक : 22 जून 2016

6. राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 एवं मातृभाषा शिक्षा

(भारतीय संविधान के चौथे भाग में उल्लिखित नीति निदेशक तत्वों में कहा गया है कि प्राथमिक स्तर पर सभी बच्चों को अनिवार्य एवं निःशुल्क शिक्षण की व्यवस्था की जाए।)

सामान्य परिचय :–

जब देश 15 अगस्त 1947 ई० को स्वतंत्र हुआ, तभी से ही भारत में शिक्षा नीति पर जोर दिया जा रहा है। सन् 1948 ई० में **विश्वविद्यालय शिक्षा आयोग** डॉ० राधाकष्ण की अध्यक्षता में बनी, फिर 1952 में **माध्यमिक शिक्षा आयोग** जिसकी अध्यक्षता श्री लक्ष्मण स्वामी मुदालियर ने की, जिसे **मुदालियर आयोग** के नाम से भी जानते है। 1964 ई० में शिक्षा नीति श्री दौलत सिंह कोठारी की अध्यक्षता में बनी जो कि 1986 का राश्ट्रीय शिक्षा नीति को **कोठारी आयोग** से जानते है। 1990 ई० में आचार्य राममूर्त्ति की अध्यक्षता में राश्ट्रीय षिक्षा नीति पर समीक्षा समिति तथा 1993 ई० में **प्रो० यशपाल समिति** का गठन किया गया।

तत्पश्चात् 34 वर्श बाद **नई शिक्षा नीति 2020** भारत की शिक्षा नीति है, जिसे भारत सरकार द्वारा **29 जुलाई 2020** को घोषित किया गया। यह नीति अंतरिक्ष वैज्ञानिक के० कस्तूरी रंगन की अध्यक्षता वाली समिति की रिपोर्ट पर आधारित है। इस नीति में शिक्षा की पहुँच, समता, गुणवत्ता वहनीयता और उत्तरदायित्व जैसे मुद्दों पर विशेश फोकस किया गया है।

पाठ्यचर्या प्रारूप – 5+3+3+4 (वर्ष 3–18 वर्ष) –

उम्र 3–8 वर्ष आयु बच्चों को शैक्षिक पाठ्यक्रम में दो समूह में बाँटा गया है।

(1) 3–6 वर्ष आंगनबाड़ी/बालवाटिका/पूर्व स्कूल/प्रारंभिक बाल्यावस्था देखभाल और शिक्षा।

(2) 6–8 वर्श प्राथमिक विद्यालय कक्षा 1–2 में शिक्षा प्रारंभिक शिक्षा को बहुस्तरीय खेल और गतिविधि आधारित बनाने की प्राथमिकता दी जाएगी।

NEP में MHRD द्वारा बुनियादी साक्षरता और संख्यात्मक ज्ञान जिसमें **निपुण भारत** (NIPUN) 5 july 2021 को आरंभ किया गया। इस योजना का पूरा नाम **नेशनल इनीशिएटिव फॉर प्रोफिशिएसी इन रीडिंग विद अंडरस्टैंडिग** एवं **न्यूमेरेसी** है।

इसके माध्यम से आधारभूत साक्षरता और संख्यात्मकता ज्ञान निपुण योजना के माध्यम से सन् 2026–27 तक प्रत्येक बच्चे को तीसरी कक्षा के अंत तक पढ़ने, लिखने एवं अंकगणित की सीखने की क्षमता प्रदान की जाएगी। इस योजना का कार्यान्वयन स्कूल शिक्षा और साक्षरता विभाग द्वारा किया जाएगा।

5 स्तरीय :– राश्ट्रीय – राज्य – जिला – ब्लाक – स्कूल में बाँटा गया है। जिसमें षिक्षकों को Digi Sath द्वारा Online कोर्स प्रशिक्षण व प्रमाण–पत्र दिया जा रहा है ताकि सभी शिक्षक हुनरमंद व प्रशिक्षित होंगे।

मूलभूत भाशा एवं साक्षरता –

– मौखिक भाषा का विकास
– ध्वनियात्मक जागरूकता
– डिकोडिंग
– शब्दावली
– लेखन–रीडिंग कप्रीहेंशन

कल्चर ऑफ रीडिंग –

– पठन प्रवाह

– प्रिंट के बारे में अवधारणा

मूलभूत संख्यात्मकता और गठित कौशल –

– पूर्व संख्या अवधारणाएँ

– नंबर एवं आपरेशन ऑन नंबर

– गठित तकनीकि

– मापन

– आकार एवं स्थानिक समाज

– पैटर्न

साथ ही झारखण्ड राज्य के JCERT (झारखण्ड शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिशद), राँची द्वारा जिला स्तरीय, प्रखण्ड स्तरीय द्वारा चार दिवसीय FNL प्रशिक्षण, शिक्षकों को दिया जा रहा है।

बुनियादी साक्षरता एवं संख्यात्मक ज्ञान –

वर्ग 1 में मातष्भाशा/हिन्दी – 70 +30 = 100.

वर्ग 2 में मातष्भाशा/हिन्दी – 50 + 50 = 100.

वर्ग 3 में मातष्भाशा/हिन्दी/अंग्रेजी = 50 + 30 + 20 = 100.

अभी 2022 से 5 वर्ष के लिए लोहरदगा जिला के 50 विद्यालयों में मातष्भाशा कुँडुख़ आधारित पायलट योजना के अन्तर्गत लागू किया गया है। बाद में यह राज्यों के सभी विद्यालयों में लागू किया जाएगा।

3 स्तर :– 9–11 वर्ष (3–5 वाँ कक्षा)

वर्ग 3, 4, 5 – मातृभाषा के माध्यम से पढ़ाई का प्रावधान है जिसमें देश के 8वीं अनुसूची वाले भाषाओं के साथ–साथ अन्य आदिवासी व क्षेत्रीय 123 भाषाओं को सूचीवद्ध किया गया है।

3 स्तर :– 12–14 वर्ष (6–8 वाँ कक्षा)

वर्ग – 6, 7, 8 वाँ

4 स्तर :– 15–18 वर्ष (9–12 वाँ कक्षा)

वर्ग – 9, 10, 11, 12

** 10वीं बोर्ड खत्म किया गया है।

** अब 12वीं वर्ग में एक बार परीक्षा होगी।

** 3 वर्ष की डिग्री उन छात्राओं के लिए जिन्हे हायर एजुकेशन नहीं लेना है।

** हायर एजुकेशन करने वाले छात्रों को 4 साल की डिग्री करनी होगी।

** 4 साल की डिग्री करने वाले स्टुडेंट एक साल में MA कर सकेंगे।

** MA के छात्र अब सीधे Ph.D कर सकेगे।

** भाषायी विविधता का संरक्षण इस शिक्षा नीति में पाँचवी कक्षा की शिक्षा में मातृभाषा/ स्थानीय या क्षेत्रीय भाषा को मातृभाषा का माध्यम बनाया जाएगा तथा बाकी कक्षा में विषय के रूप में चयनित कर आगे की पढ़ाई की जाएगी।

पाठ्यक्रम और मूल्यांकन –

इस नीति में प्रस्तावित सुधारों के अनुसार कला और विज्ञान व्यावसायिक तथा शैक्षणिक विशयों एवं पाठ्यक्रम के लिए मानक निर्धारित की गई है।

राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिशद् NCERT सेमेस्टर या बहुविकल्पीय प्रश्न परख – राश्ट्रीय आकलन केन्द्र की स्थापना की जाएगी कषत्रिम बुद्धिमता 2022 तक – शिक्षकों के लिए राश्ट्रीय व्यवसायिक मानव का विकास किया जाएगा।

राश्ट्रीय अध्यापक शिक्षा परिशद = वर्श 2030 तक अध्यापक के लिए न्यूनतम डिग्री योग्यता 4 वर्शीय एकीकष्त बी०एड० डिग्री का होना अनिवार्य किया जाएगा।

NEP - 2022 के तहत स्नातक पाठ्यक्रम में मल्टीपल एन्ट्री एंड एक्जिट व्यवस्था को अपनाया गया है।

3 या 4 वर्श के स्नातक कार्यक्रम में छात्र बीच में भी छोड़ सकते है।

1 वर्ष के बाद – प्रमाण–पत्र

2 वर्ष के बाद – एडवांस डिप्लोमा

3 वर्ष के बाद – स्नातक डिग्री

4 वर्ष के बाद – शोध के साथ स्नातक उपाधि प्रदान की जाएगी।

अंको को डिजिटल द्वारा सुरक्षित रखने के लिए एक एकेडमिक बैंक ऑफ क्रेडिट द्वारा किया जाएगा।

M.phil कार्यक्रम समाप्त किया गया है।

भारत उच्च शिक्षा आयोग का गठन (चिकित्सा एवं कानूनी शिक्षा को छोड़ कर) –

– विनियमन हेतु – राष्ट्रीय उच्चतर शिक्षा नियामकीय परिशद्

– मानक निर्धारण – सामान्य शिक्षा परिशद्

– वित्त पोशण – उच्चतर शिक्षा अनुदान परिशद्

– प्रत्यायन – राश्ट्रीय प्रत्यायन परिशद्

देश में आई०आई०टी० और आई०आई०एम० के समकक्ष वैश्विक मानको के बहुविषयक शिक्षा एवं अनुसंधान विश्वविद्यालय की स्थापना की जाएगी।

एक राष्ट्र, एक शिक्षा के आधार पर भविष्य में कार्य योजना बन रही है। जिसे सम्पूर्ण भारत में 2027 ई० से लागू किया जाएगा।

प्रस्तुतकर्त्ता –
डॉ० बन्दे खलखो
कुँड़ुख़ सहायक शिक्षक
रा० कष्० उ० उ० वि० राय,
बुड़मु, खलारी, राँची
मो. 8709824623
दिनांक –13.03.2022
सम्प्रति – सहायक प्राध्यापक
जनजातीय एवं क्षेत्रीय भाषा विभाग

7. राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 एवं मातृभाषा शिक्षा सह कुँड़ुख़ भाषा तोलोंग सिकि तथा धुमकुड़िया विषय पर तीन दिवसीय कार्यशाला सम्पन्न

दिनांक 12 मार्च से 14 मार्च 2022 तक ऐतिहासिक पड़हा जतरा खुटा शक्तिस्थल, मुड़मा, राँची में अवस्थित सांस्कृतिक भवन में तीन दिवसीय कार्यषाला मातृभाषा षिक्षा सह कुँड़ुख़ भाषा तोलोंग सिकि तथा धुमकुड़िया विषय पर सम्पन्न हुआ। इस कार्यषाला में झारखण्ड, प. बंगाल, ओडिसा, छतीसगढ़ तथा पड़ोसी देष नेपाल से कुँड़ुख़ भाषा प्रेमी उपस्थित थे। यह कार्यषाला टाटा स्टील फाउण्डेषन, जमषेदपुर के तकनीकी सहयोग तथा अद्दी कुँड़ुख़ चाःला धुमकुड़िया पड़हा अखड़ा (अद्दी अखड़ा), राँची एवं राजी पड़हा सरना प्रार्थना सभा, भारत, मुड़मा, राँची के संयुक्त संयोजन में सम्पन्न हुआ। इस कार्यशाला के उद्घाटन समारोह में मुख्य अतिथि के रूप में कार्मिक, प्रशासनिक सुधार एवं राजभाषा विभाग के प्रधान सचिव श्रीमती वंदना दादेल उपस्थित थीं। उद्घाटन समारोह की अध्यक्षता, विनोवा भावे विश्वविद्यालय, हजारीबाग के पूर्व कुलपति, एवं बिजनेस मैनेजमेंट विभाग, बी. आई.टी. मेसरा, राँची के प्रोफेसर डॉ. रविन्द्र नाथ भगत द्वारा किया गया। उद्घाटन समारोह में सम्मानित अतिथि के रूप में टाटा स्टील फाउण्डेषन के एजुकेटिव अधिकारी श्री षिवषंकर कांडेयोंग, राजी पड़हा सरना प्रार्थना सभा के अध्यक्ष (प्रभारी) श्री विद्यासार केरकेट्टा, अद्दी कुँड़ुख़ चाला धुमकुड़िया पड़हा अखड़ा (अद्दी अखड़ा), राँची के अध्यक्ष श्री जिता उराँव एवं ग्राम मुड़मा (माण्डर थाना, राँची) के पहान श्री सिबु उराँव उपस्थित थे। प्रथम दिवस पर लोग रात्रि 8.00 बजे तक दूर–दूर से आकर निबंधन कराया तथा एक दूसरे से परिचय करते हुए अगले दिन की तैयारी के लिए रात्रि विश्राम किया।

कार्यशाला के उद्घाटन समारोह में मुख्य अतिथि के रूप में कार्मिक, प्रशासनिक सुधार एवं राजभाषा विभाग, झारखण्ड की प्रधान सचिव श्रीमती वंदना दादेल द्वारा कार्यशाला में राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 एवं मातृभाषा षिक्षा सह कुँड़ुख़ भाषा तोलोंग सिकि तथा धुमकुड़िया विषय पर अपना विचार प्रकट करते हुए।

कार्यशाला के पूर्व सामूहिक प्रार्थना से शुभारंभ किया गया। तत्पश्चात दिनांक 13 मार्च 2022 को श्री महादेव टोप्पो (साहित्यकार) द्वारा – ''एःकना दिम तोःकना, कत्था दिम डण्डी अरा धुमकुड़िया'' विषय पर ज्ञानवर्द्धक व्याख्यान प्रस्तुत किया गया। उसके बाद डॉ. अभय सागर मिंज, सहायक प्राध्यापक, मानवशास्त्र विभाग, डी.एस.एस.एम. विश्वविद्यालय, राँची द्वारा –''विलुप्त होती भाषाएँ और उसको बचाने के उपाय'' विषय पर व्याख्यान प्रस्तुत किया गया। ततपश्चात् 11.30 बजे स कार्यशाला का उद्घाटन सत्र आरंभ हुआ। अतिथियों का पुष्प गुच्छ से स्वागत किया गया। कार्यशाला का उद्घाटन सत्र की अध्यक्षता डॉ० आर०एन० भगत के द्वारा किया गया। आयोजन समिति के अध्यक्ष श्री विद्यासागर केरकेट्टा जी द्वारा समाज की बातों को क्रमवार रखा गया। अध्यक्ष द्वारा भी समूह की बातों को संजोकर प्रस्तुत किया गया। श्री लवहरमन उराँव ने जनगणना विषय की महत्ता पर व्याख्यान दिया।

दूसरे दिन 14 मार्च को डॉ० नारायण उराँव द्वारा कुँड़ुख़ भाषा विज्ञान तथा तोलोंग सिकि लिपि विषय पर विस्तृत जाकारी दी गई तथा डॉ० बैजन्ती उराँव द्वारा आदिवासी खान–पान एवं पोषक तत्व विषय पर शोध निबंध प्रस्तुत किया गया। अंत में श्री सरन उराँव द्वारा 12 महीना 13 राग वाली कहावत को संपुष्ट करते हुए अपना कार्यक्रम प्रस्तुत किया।

कार्यषाला का समापन सत्र डॉ. करमा उराँव की अध्यक्षता में सम्पन्न हुआ। उन्होंने कहा – एक पूर्ण एवं विकसित भाषा के लिए लिपि आवश्यक है।

8. राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 एवं मातृभाषा शिक्षा में धुमकुड़िया की प्रासंगिकता

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020, देश में लग चुका है। यह शिक्षा नीति, झारखण्ड में वर्ष 2022 से लागू है। इसके तहत आदिवासी बहूल क्षेत्र में 5 आदिवासी भाषा (कुँड़ुख़/उराँव, मुण्डा, खड़िया, हो एवं संताल) को मातृभाषा के रूप में 1ली से 5वीं कक्षा तक पढ़ाई–लिखाई कराये जाने की योजना आरंभ की जा चुकी है। इस राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 में झारखण्ड वासियों के लिए त्रिभाषा शिक्षा (हिन्दी, अंगरेजी और मातृभाषा) नीति को आधार बनाया गया है।

यह पाठ्यक्रम योजना 5+3+3+4 के रूप में प्रारूपित है। इसमें से प्रथम 5 को 3+2 के रूप में विस्तारित किया गया है। इन 5 में से पहला 3 वर्ष का समय, पूर्वशिक्षा को सूचित करता है तथा बाद वाला 2 वर्ष, क्रमशः 1ली एवं 2री कक्षा का समय सूचक है। अर्थात अब अभिभावक अपने बच्चों को 3 वर्ष का उम्र पूरा करने के बाद सरकार द्वारा नियोजित पूर्वशिक्षा केन्द्र में भेजेंगे, जहाँ वे नर्सरी में 1वर्ष, एल.के.जी में 1 वर्ष तथा यू.के.जी में 1 वर्ष की तरह शिक्षा केन्द्र भेजा करेंगे। इस तरह उक्त 5 बर्ष तक सरकार द्वारा प्रायोजित केन्द्र में बच्चा 2री कक्षा उतीर्ण करेगा। उसके बाद 5+3+3+4 में से पहले 3 वर्ष के अंतराल में बच्चे, क्रमशः 3रा, 4था एवं 5वाँ कक्षा तय करेगा तथा उक्त 5+3+3+4 में से अगले 3 वर्ष के अंतराल में बच्चा, क्रमशः 6ठा, 7वाँ, 8वाँ कक्षा तय करेगा। इसी तरह उक्त 5+3+3+4 में से अंतिम 4 वर्ष के अंतराल में बच्चा, क्रमशः 9वां, 10वां, 11वां एवं 12वां कक्षा तय करेगा। इस नई योजना में 10वां बोर्ड को निरस्त किया गया है। अब 10वीं के स्थान पर 12वीं बोर्ड होगा।

वर्तमान समय के ग्रामीण क्षेत्रों के अधिकतर विद्यालयों में पूर्व शिक्षा योजना हेतु 3 साल के बच्चे के लिए विशिष्ट स्कूली व्यवस्था नहीं है। तब इस नई व्यवस्था के अंतर्गत 4 वर्ष से 6वर्ष के बच्चों को आंगनवाड़ी या शिक्षा वाटिका से जोड़ने की बात कही जा रही है। इस तरह यदि पूर्व शिक्षा योजना को आंगनवाड़ी से जोड़ा जाता है तो यह प्रश्न उठेगा कि क्या, सभी (कुँड़ुख़/उराँव बहुल क्षेत्र) क्षेत्र के आधे से अधिक आंगनवाड़ी सेविकाएँ उक्त भाषा या लिपि नहीं जानती है। क्या, समाज के लोग इस संबंध में कोई निर्णय ले पाएंगे! अब समाज को राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 एवं मातृभाषा शिक्षा योजना पर विस्तार पूर्वक विचार–विमर्श एवं निर्णय करने की आवश्यकता है।

वैसे पूर्व में सभी गाँव–टोला में अवस्थित पारम्परिक सामाजिक पाठशाला धुमकुड़िया में उराँव समाज के बच्चों को 7वें वर्ष में प्रवेश कराया जाता था। प्रत्येक माता–पिता अपने बच्चों के लिए बैठने के लिए कण्डो या पिटरी, रोशनी के लिए टट्ठी और करंज तेल के साथ माघ महीने में धुमकड़िया पहुँचाया करते थे। आरंभिक समय में लड़के–लड़कियाँ सभी साथ–साथ उठते–बैठते तथा जीवन जीने के तरीके सीखा करते थे। उम्र बढ़ने के साथ लड़कियों का मानसिक तथा शारीरिक विकास होने के साथ जब उनका मासिक धर्म आरंभ होता था तो उन्हें पेल्लो एड़पा प्रवेश कराया जाता था। पेल्लो एड़पा में लड़को का प्रवेश वर्जित होता था। धीरे–धीरे उम्र बढ़ने के साथ शादी के लिए बातचीत तय होने पर लड़के–लडकियों को धुमकुड़िया से विदाई दी जाती थी।

इस पारम्परिक धुमकुड़िया में सुनकर बोलने तथा देखकर बोलने की कला विकसित थी, परन्तु देखकर लिखने एवं पढ़ने की कला विकसित नहीं थी, जिसके चलते पारम्परिक धुमकुड़िया, आधुनिक स्कूल का सामना नहीं कर पाया और समय की तुलना में पिछड़कर, बिछड़ गया।

परम्परागत आदिवासी समाज की चुनौतियाँ –

1. नई शिक्षा नीति 2020 में मातष्भाशा षिक्षा का प्रावधान है, जिसमें पूर्व शिक्षा योजना के अन्तर्गत आंगनवाड़ी को स्थान दिया जाना है, परन्तु वर्तमान समय में अधिकतर आंगनवाड़ी शिक्षिकाएं मातृभाशा शिक्षा मे निपुण नहीं होने की स्थिति में धुमकुड़िया शिक्षा के आरंभ होने से बच्चें बेहतर करेंगे।

2. NEP में पूर्वशाला या आंगनवाड़ी की तरह धुमकुड़िया के लिए Para teacher के अनुशिक्षक एवं सरकारी पठन–पाठन सामग्री सरकारी व्यवस्था से सहायता मिलनी चाहिए ?

3. आधुनिक शिक्षा के प्रचार–प्रसार के बाद आदिवासी समाज में परम्परागत शिक्षा से दूर हो गये और आधुनिक शिक्षा व्यवस्था के चकाचौंध में घिरते चले गए। कहा जाता है वर्तमान समय के सरकारी शिक्षा व्यवस्था में 8वीं कक्षा तक के बच्चों को फेल नहीं किया जाना है। इससे बच्चे उपरी कक्षा की पढ़ाई में पिछड़ रहे हैं और 9वीं–10वीं कक्षा तक पहूंचते–पहूंचते पढ़ाई–लिखाई बोझ लगने लगता है और डर एवं सामाजिक दबाव में ईंट भटटा में काम करने जाने लगे हैं।

4. गांव स्तर में बच्चों की बेहतर शिक्षा के न मिलने के कारण लोग नशाखोरी के चक्कर में फंसते जा रहे रहे हैं। यदि वाल्यकाल में धुकुड़िया के माध्यम से शिक्षा का बेहतर अवसर मिले तो नई पीढ़ी को नशापान एवं Drug addiction से बचाया जा सकता है।

5. वर्तमान समय में आदिवासी समाज में विचित्र स्थिति बन गई है। लोग खेत में काम करना नहीं चाहते हैं। उनका कहना है कि जब सरकार 02 रूपये किलो चावल दे रही है तो दूसरे के खेत में मजदूरी क्यों करें। इसके चलते लोग बेरोजगारी और बदहाली से घिरते जा रहे हैं।

6. गांव स्तर में बच्चों की बेहतर षिक्षा के आरंभिक समय के लिए सरकार एवं समाज को मिलकर धुमकुड़िया माध्यम से शिक्षा का बेहतर अवसर का लाभ मिलेगा।

आलेख एवं विचार – डॉ. नारायण उराँव ''सैन्दा''

9. धुमकुड़िया / [illegible]

(एक पारम्परिक सामाजिक पाठशाला सह कौशल विकास केन्द्र)

(DHUMKUṚIYA : A Traditional Social School Cum Skill Development Centre)

भारत देश के झारखण्ड राज्य क्षेत्र में –

आंकड़े के अनुसार, झारखण्ड में 32+ अनुसूचित जनजातियाँ हैं। उन 32+ जनजातियों में से उराँव, मुण्डा, हो, खड़िया, संताल, असुर, बैगा, बिरहोड़, बिरजिया इत्यादि आदिवासी समुदाय, सदियों से जंगल–झाड़ पहाड़–पर्वत, नदी–नाला के बीच गुजर–बसर करते आये हैं। इस नदी–नाला, जंगल–पहाड़ में हमारे पूर्वज ने अनोकों प्रकार की विषम परिस्थितियों के बीच अपने वंशजों को बचा कर यहाँ तक ला पाये, यह मानव सभ्यता के इतिहास में अविवरणीय है। दूसरे शब्दों में कहें कि – *जिस समय हमारे पूर्वजों के बीच तथाकथित विकसित स्कूल, कॉलेज, थाना, पुलिस, कोर्ट, कचहरी, मन्दिर, मस्जिद, गिरजा आदि नहीं पहूँचा था, उस समय कौन सी व्यवस्था या ताकत के आधार पर हमारे पूर्वजों ने हम सबों कों यहाँ तक पहूँचाया।* क्या, हम उन ताकतों को पहचान पाये हैं? क्या, हम सभी उन ताकतों को संजो कर रख पाये है ? इसका उत्तर है – नहीं! आधुनिक शिक्षा व्यवस्था के प्रचार–प्रसार के चकाचौंध में वे पुरानी व्यवस्था मरणासन हो रहीं हैं।

हमारे उराँव पूर्वजों के पास जो व्यवस्था एवं ताकत थी, वह निम्न प्रकार हैं –

1. अखड़ा
2. धुमकुड़िया
3. पद्दा पंच्चा (गाँव सभा/ग्राम सभा)
4. पड़हा (पड़हा–पंच्चा)
5. चाःला थान (चाःला अयंग/सरना माय)
6. देबीगुड़ी थान (देबी अयंग/गवाँ देबी)
7. बिसुसेन्दरा आदि।

क्या, पूर्वजों द्वारा स्थापित इन शक्तियों अथवा संसाधनों को हम उन पूर्वजों के वंशज संजोकर रख पाये हैं ? इसका उत्तर है – नहीं ! यदि नही, तो हम कैसे बचे रहेंगे ?

पूर्वजों द्वारा स्थापित उन शक्तियों अथवा संसाधनों का विघटन कैसें हुआ –

समाज शास्त्र में पढ़ाया जाता है – मनुष्य की आवश्यक आवश्यकता 3 (तीन) है –

1. रोटी 2. कपड़ा 3. मकान।

इसी समाज शास्त्र में पढ़ाया जाता है, विकसित मनुष्य की आवश्यक आवश्यकता 06 है –

1. रोटी 2. कपड़ा 3. मकान 4. स्वास्थ्य 5. शिक्षा 6. अध्यात्म।

जैसे–जैसे देश के बड़े समूह की संस्कृति एवं यूरोपियन पढ़ाई–लिखाई की व्यवस्था हमारे बीच आयी, वैसे–वैसे हमारी चीजें सिमटती गईं, क्योंकि पठन–पाठन में हमारी बातें नहीं पढ़ाई जाती हैं।

दूसरी ओर हमारा शिक्षण केन्द अखड़ा, धुमकुड़िया आदि, बाहर से आया शिक्षण केन्द्र, यहां के शिक्षण केन्द्र से अधिक उन्नत था। तथ्य है कि बाहर से आये शिक्षण केन्द्र में श्रुति साहित्य के साथ लिखित साहित्य आया, जो हमारी व्यवस्था का शिक्षण केन्द्र का स्वभाविक मौत का कारण बना। क्या, हम श्रुति साहित्य एवं लिखित साहित्य को साथ लेकर नये सिरे से अपने सामाजिक शिक्षण केन्द्रों को पुनर्गठित करने हेतु कार्य आरंभ कर सकेंगे?

धुमकुड़िया के विषय में आलेख–परिचर्चा निम्नलिखित विद्वतजनों के पुस्तकों में –

1. Sarat Chandra Roy – The Oraons of Chhotanagpur,

Published - 1915, Reprinted - 2020.** The village dormitories, and the training of youth. (Page 134-201)
** The bachelor's dormitories (Jonkh Erpa or Bachelor's house)

2. A Grignared — An Oraon-English Dictionary.

Published - 1924, Reprinted - 1950. Dhumkuriya or jokh erpa: Bachelor's hall in the Eastern part of Chhotanagpur, a large hut constructed jointly by the boys of every village, and used by them as a public dormitory; it's real object is to train the younger boys to drumming, singing, and dancing at the feasts.

3. Dr. L.P. Vidyarthi : The Tribal Culture of India,

Published - 1976, Reprinted - 1985. Youth dormitories : An Institution at Tribal Village Level Dhumkurriya – The Oraon youth dormitory has been described, from time to time, by E.T. Dalton (1872), Father P Dehon (1905) and S.C. Roy (1915). Page – 368.

4. Bhikhu Tirki – Oraon -Sarna : Dharm Aur Sanskrity,

Published - 2011, Reprinted - 2014.

धुमकुड़िया दो हैं –
1. जोंख़ धुमकुड़िया (जोंख़ एड़पा)
2. पेल्लो धुमकुड़िया (पेल्लो एड़पा)। (पृष्ठ 155)

5. Dr. Giridhari Ram Gaunjhu 'Giriraj' – Oraon Avam Sadan Sanskrity, Published - 2020.
1. उरांव समाज में शिक्षा के लिए धुमकुड़िया बनाया जाता हैं। (पृष्ठ 195)
2. सदान लोगों में धुमकुड़िया या युवागृह नहीं होते। (पृष्ठ 196.)

धुमकुड़िया के साथ कुँड़ुख़ एवं उराँव शब्द का अर्थ कुँड़ुख़ भाषा में समझें –

प्रस्तुत व्याख्यान में धुमकुड़िया को समझने के लिए तीन शब्द – धुमकुड़िया, कुँड़ुख़ एवं उराँव का अर्थ कुँड़ुख़ भाषा में समझने का प्रयास करना चाहिए। अबतक जितने भी किताब लिखे गए हैं, वे या तो अंगरेजी में लिखे गए हैं या हिन्दी में। तब बात उठती है कि क्या, सभी कुँड़ुख़ भाषा का शब्द अंगरेजी या हिन्दी में उसका अर्थ हू–ब–हू एक जैसा है। यदि नही तो उसे किस तरह से पेश किया गया। यहीं से गड़बड़ी शुरू हुई है। धुमकुड़िया के लिए अंगरेजी में Bachelor's dormitories / Jonkh Erpa / Pello Erpa / Bachelor's house / Youth dormitories शब्द का व्यवहार हुआ। यहाँ बच्चों का या बालपन का समय छीन लिया गया और सीधे युवा के बारे लिखा गया। जबकि समाज में धुमकुड़िया प्रवेश का वर्ष लगभग 7वें वर्ष में किया जाता था। इसी तरह पेल्लो उसको कहा जाता है जिसका मासिक धर्म (menstruation) आरंभ हो चुका हो, जो लगभग 12 वर्ष के उम्र तक हो जाता है, और पेल्लो लोगों को पेल्लो एड़पा मंक्खना (किशोरी गृह प्रवेश) किया जाता था। इस

तरह धुमकुड़िया शब्द का हिन्दी या अंगरेजी अनुवाद में न्याय नहीं हुआ

क्या है, धुमकुड़िया का अर्थ कुँड़ुख़ भाषा में ?

धुमकुड़िया शब्द – धुम–ताअ़ + कुड़िया अथवा धुम–धुम कुड़िया के योग से धुमकुड़िया शब्द बना है। कुँड़ुख़/उराँव समाज में बुजूर्ग या दादा–दादी लोग अपने पोते–पोतियों का अंगुली पकड़कर समाज के साथ चलना सिखलाते हुए बोला करते हैं – गुचा नतिया, धुम–ताअ़ बेःचा/लगे धुम–ताअ़ बेःचा। यह धुम–ताअ़ का धुन एवं ताल मान्दर थाप का ध्वनि प्रतीक है। इस धुम ताअ़ का ताअ़ शब्द खण्ड क्रिया शब्द का मध्य प्रत्यय है, जो प्रेरणार्थक क्रिया सूचक है। जैसे – नन + ना = ननना (करना), नन + ताअ़ + ना़ = ननताअ़ना (करवाना)। इस प्रकार धुमकुड़िया में बच्चों के साथ बड़े बुजूर्ग अर्थात सिखलाने वाले ही परोक्ष रूप में प्रेरणार्थक होते हैं।

दूसरा पक्ष यह है कि जब कभी गांव–घर में बच्चे या नवयुवक अनुशासन में रहकर लयवद्ध तरीके से नाचते–गाते हैं तो बुजूर्ग कहा करते हैं – इन्ना गा जोंःख़र अकय दव बिच्चय – धुम–धुम ख़रख़ा लगिया। वहीं पर यदि बच्चे या नवयुवक अनुशासनहीन तरीके से, मौसम और बिना मेल वाला राग के साथ नाचते–गाते हैं तो बुजूर्ग कहा करते हैं – इन्ना गा जोंःख़र–पेल्लर मलदव बिच्चय – धम्म–धुम ख़रख़ा लगिया।

कुँड़ुख़ शब्द की व्युत्पत्ति एवं अर्थ, कुँड़ुख़ भाषा में

कुँड़ुख भाषा में मांस को आग में सेंक कर खाने की विधि को कुड़ना–मोःख़ना कहा जाता है। इस तरह कुड़ा–मोःख़ा अक्खर दरा बेलख़न सिखाबाःचर ख़ने कुंड़ख़र। कुड़ना–मोःख़ना सिखिरकत दरा सिखाबाचकत ख़ने कुँड़ख़त। सभ्यता के विकास के आरंभिक काल में जब हमारे पूर्वज जंगलों में सूखे बांस के झूरमूठ में से बांसों के आपस में रगड़ाने से चीं .... चीं ... की ध्वनि सुनते रहे, जहाँ एक दिन अचानक बांस के झूरमुठ को जलकर राख होते हुए देखा। बांस के झूरमुठ को आग की लपट से जलते देख भयवश को चीं .... चीं ... से चिच्च (आग, दावानल) कहा तथा जलने के बाद बचे हुए को चीं .... चीं ... से चिन्द (राख) कहा। धीरे–धीरे उस चिच्च (आग, दावानल) में कच्चे मांस को सेंककर खाने की विधि की खोज की। आज भी परम्परागत रूप से पूजा अनुष्ठान में बलि चढ़ाये गये जीव के कलेजे को आग में सेंकने के बाद, चढ़ावा दिया जाता है। इसी तरह से कुड़ा–मोःख़ा अख़कम ख़ने कुँड़ख़म शब्द बना हो। यह नाम आखेट काल या उससे पहले का प्रतीत होता है।

उराँव शब्द की व्युत्पत्ति एवं अर्थ कुँड़ुख़ भाषा में –

Sarat Chandra Roy के अनुसार Oraon शब्द O Ram या O Rawan से उराँव हुआ है। तो क्या, रामायण काल में उराँव लोग English बोलते थे ? क्योंकि कुँड़ुख़ भाषा में ओ बाबु या ओ राम या ओ रावण की तरह नहीं बोला जाता है। कुँड़ुख़ भाषा में आह्वान करने के लिए **– अना धरमे** या **ए दे धरमे** बोला जाता है। **ओ ईश्वर** या **ओ राम** कहने का यह अंगरेजी तरीका है। कुंड़ुख़ भाषा में ऐसा तरीका नहीं है।

कुँड़ुख भाषा में हल चलाने वाले को ''उयुर तथा हल चलाने से पहले खर–पतवार से आग जलाकर खेत तैयार करने वाले को अवाँ चि'उर'' कहा गया है। इस तरह घेरा बंदी करके, जंगल साफ कर खेत में हल चलाने से पहले खर–पतवार से आग जलाकर खेत तैयार करने वाले समूह ही, उयूर + अवाँ चिउर से उयुरवाँ – उरवाँ कहते–कहते उराँव कहलाये। संभवतः यह नाम कृषि काल से संबंधित है।

उराँव पूर्वजों द्वारा धुमकुड़िया के सदस्यों का वर्गीकरण –

1. 4था वर्ष से 6ठा वर्ष तक – लेद्दे तूड़ (Pre Dhumkuriya age, Pre School age)
2. 7वाँ वर्ष से 12वाँ वर्ष तक – सन्नी तूड़ (Dhumkuriya age, Primary School age)
3. 13वाँ वर्ष से 18वाँ वर्ष तक – चेंड़ा तूड़ (Young Dhumkuriya age, Secondary School age)
4. 19वाँ वर्ष से शादी तक – कोहाँ तूड़ (Young adults dhumkuriya age, Higher Secondaryl age)

धुमकुड़िया : एक परिचय –

''धुमकुड़िया, उरांव आदिवासी समुदाय की एक पारम्परिक सामाजिक पाठशाला सह कौशल विकास केन्द्र है''। (Dhumkuriya is a Traditional

Social School cum Skill Development Centre in an Oraon Tribal Village.).

धुमकुड़िया, उराँव आदिवासी समाज की एक पारम्परिक सामाजिक पाठशाला सह कौशल विकास केन्द्र है। प्राचीन काल में प्रत्येक गाँव में व्यक्तित्व एवं कौशल विकास के लिए सामाजिक पाठशाला हुआ करता था, जो गाँव के लोगों द्वारा ही चलाया जाता था। समय के साथ यह पारम्परिक सामाजिक, व्यक्तित्व एवं कौशल विकास केन्द्र विलुप्त होने की स्थिति में है। कुछ दशक पूर्व तक यह संस्था किसी–किसी गाँव में दिखलाई पड़ता था किन्तु वर्तमान शिक्षा पद्धति के प्रचार–प्रसार के बाद यह इतिहास के पन्ने में सिमट चुका है। कुछ लेखकों ने इसे युवागृह कहकर यौन–शोषन स्थल के रूप में पेश किया, तो कई मानवशास्त्री इसे असामयिक कहे, किन्तु अधिकतर चिंतकों ने इसे समाज की जरूरत कहते हुए सराहना की है। आदिवासी परम्परा में मान्यता है कि – यह लयवद्ध तरीके से समाज के लोगों के लिए सामाजिक जीवन जीने की कला सीखने तथा कौशल विकास करने का केन्द्र है। (It is a Traditional Social School cum Skill Development Centre of Children and Young Adults among Oraon tribe.)

कुँड़ुख़ (उराँव) आदिवासी समाज में धुमकुड़िया एक ऐसी षाष्वत व्यवस्था रही थी जो किसी गाँव या टोला के सभी लड़के–लड़कियों के लिए (लिंग भेद रहित) होता था। ऐसा उदाहरण किसी भी देश या समुदाय में सामान्य रूप से प्रचलित नहीं दिखता है। वैसे भारतीय इतिहास में पुराने राजा–महाराजाओं के राजपाट में गुरूकुल नामक संस्थान हुआ करता था, जिसमें सिर्फ षासक वर्गों के पुरूश बच्चे ही प्रवेश पाते थे। जन–साधारण के लिए वहाँ प्रवेश नहीं था अथवा वर्जित था। वर्तमान शिक्षा पद्धति की तुलना में इस सामाजिक शिक्षण केन्द्र में Visual language (लिखिक भाषा) का प्रयोग नहीं र होता था, जो आध ुनिक शिक्षा प्रणाली के Visual language (लिखित भाषा) की तुलना में पिछड़ गया और पिछड़ता ही रहा।

पौराणिक व्यवस्था :– कई बुजूर्ग बतलाते है कि उनका बचपन गांव में बीता और मैट्रिक तक की पढ़ाई वे गांव में रहकर पूरा किये। उन दिनों गांव में लड़कों का समूह किसी एक जगह बैठा करता था और वहाँ पर एक बुजूर्ग द्वारा बच्चों एवं किशोर–किशोरियों को अपनी भाशा में कहानी एवं बुझवल बतलाया करते थे। इसी तरह जाड़ा के दिनों में कटे हुए फसल की रखवाली के लिए बना कुम्मबा में वे सोने जाया करते थे और वहाँ षादी राग में गाना (जाड़ा मौसम का राग) गाने सीखते थे। अपने से बड़े उम्र वाले से मांदर बजाना सीखते थे। हल बनाना, छप्पर छारना, लकड़ी का औजार बनाना आदि कार्य, गाँव में रहकर गाँव के बड़–बुजूर्गों से सीखा जाता था। ऐसा शिक्षण–प्रशिक्षण गाँव में अभी भी प्रचलित है। वे भी उसी समूह में रहकर गाना, बजाना एवं ग्रामीण नृत्य सीखे। परन्तु अब आधुनिक शिक्षा के प्रसार से ये तमाम ग्रामीण शिक्षा की बातें विलुप्ति की ओर जा रही हैं। इसके स्थान पर मोबाइल का गाना या गूंगा नाच, जगह ले रखा है, जो आदिवासी परम्परा एवं इतिहास के लिए एक चुनौती है।

एक महिला, अपने बचपन के समय की बातें याद करते हुए कहती हैं कि गर्मी के दिनों में सभी तरह के कार्य सिखलाये जाते थे। हमलोग सभी लड़कियाँ चटाई बनाने के लिए घेतला बीनती थीं। उसके बाद उससे चटाई बनाती थीं। कभी–कभी नेठो बनातीं, कोई–कोई झाड़ू बनाने के लिए कताई करती थीं। ये सब बड़े बुजूर्गों की देख रेख में किया जाता था।

(धुमकुड़िया नू हुरमी रकम घी उज्जना–बिज्जना गही प्रशिक्षण मना लगिया। ओरोत आःली तंगहय कुकोय परिया ता बेड़न ईयाइद ननर ब'ई – एम जामों कुकेर, अयंग बगय, अज्जी बगय (सभी महिलाएँ) नेःखअय एड़पन्ता ढाबा कोंहा रआ लगिया, अन्नू जेट्ठे बेड़ा नू घेतला तेस्सा लइक्कम। ओंघोंन– ओंघोंन पिटरी सटना, बिण्डो कामना, चलकी कामना गुट्ठी सिखिरआ दरा कमआ लइक्कम। एन्नेम 0बबा बगर 5–6 झनर मन्न एख़ नू ओक्कर सनई मेःरन, ढेरा ती एःप ढेरआ लगियर अरा उगता–पगसिन छोलआ–कमआ लगियार। एकअम पुना उगता–पगसी कमआ सिखिर'उर पचगिर गने लग्गर की सिखिरआ कमआ लगियर। फग्गु–ख़द्दी गे पेल्लर एड़पन एःगर चेम–चेम ले उईय्या लगियर। इबड़ा गुट्ठीन एन इन्नेला घोखदन ख़ने आद ओन–रकम ती धुमकुड़िया ता नलय बेसेम लग्गी)।

धुमकुड़िया का पतन क्यों और कैसे हुआ –

वैसे धुमकुड़िया के पतन का सही–सही कारण तो अज्ञात है। पर गाँव समाज के लोगों से बातचीत करने पर कुछ ऐतिहासिक घटना क्रम प्रकाश में आता है। छोटानागपुर के महाराजा का पुराना किला झारखण्ड में राँची जिला के रातू थाना क्षेत्र में अवस्थित है। रातू महाराजा के समय

काल में अंगरेजी हुकुमत तथा राजा–जंमीदार के अन्याय के खिलाफ कई आदिवासी आंदोलन हुए। वर्ष 1830–31 में कोलहान क्षेत्र में कोल विद्रोह हुआ तथा वर्ष 1831–32 में लरका आंदोलन हुआ। लरका आंदोलन के नायक अमर शहीद वीर बुधू भगत का क्रांतिवीर गाथा को भारतीय इतिहास में सम्मानित स्थान नहीं मिला। उस वीर नायक के कुटुम्ब के लगभग 300 से अधिक सदस्य एक समय–काल में तथा एक ही क्षेत्र में शहीद हुए, जिसे भारतीय इतिहास में नजर अंदाज कर दिया गया। सन् 1832 ई० का लरका आन्दोलन, एक असहयोग आन्दोलन के साथ गुरिला आंदोलन भी था। लोग छोटानागपुर के महाराजा को लगान देना बंद कर दिये थे। सिसई (गुमला) के जंमीदार परिवार के श्री राजकिशोर शर्मा जी का कहना है कि लरका आंदोलन इतना भयावाह था कि रातू महाराजा (छोटानागपुर के महाराजा) का कोषागार खाली हो गया और उनके पूर्वजों ने महाराजा का फौज (घोड़ा–हाथी सहित) को 06 महीना तक संरक्षण (खाना–खोराकी) दिया। इसके बदले में रातू महाराजा द्वारा जंमीदारी के लिए 03 गांव (ग्राम छारदा, थाना सिसई, ग्राम हेंजवे, थाना माण्डर, ग्राम परसी, थाना कमडरा) दिया गया। वह दौर, अंगरेजी शासन के लिए भी चुनौती था, जिसे अंगरेजों ने एक नई युक्ति से काम किया। कहा जाता है – लरका आंदोलन, भूईंहरी–खूटकटी खेत एवं खेतीहर का आंदोलन था। उरांव–मुण्डा लोग, जंगल साफ करके भूईंहरी–खूटकटी खेत बनाये और वे इस जमीन का लगान, नहीं देना चाहते थे और रातू महाराजा जबरन सभी जमीन के खेती से लगान वसूल करवाते थे। इस तरह, अंगरेज और महाराजा का मालगुजारी तथा बेठ–बेगारी के विरोध में जबरदस्त आंदोलन खड़ा हुआ, जिसका अगुवा वीर बुधूभगत ने किया। पर, वीर बुधूभगत का विभत्स शहादत के बाद उराँव समाज का आधार स्तंभ पड़हा और धुमकुड़िया धीरे–धीरे सहमता गया तथा प्राकृतिक मौत की ओर बढ़ता ही गया।

अमर शहीद वीर बुधू भगत द्वारा उराँव समाज की परम्परागत सामाजिक व्यवस्था पड़हा–धुमकुड़िया को संगठित कर अंगरेजी हुकुमत के खिलाफ आंदोलन किया गया। इस सामाजिक सशक्तिकरण का अवयव अंग को अंगरेजी सरकार भी समझ चुकी थी कि उराव–मुण्डा क्षेत्र में पड़हा–धुमकुड़िया जबतक संगठित रहेगा, इन्हें जड़ से अखाड़ पाना कठिन होगा। इसलिए अंगरेजी हुकूमत ने अपने कार्य प्रणाली में बदलाव किया और वे – 1. छोटानागपुर क्षेत्र में भूईंहरी–खूटकटी जमीन का सर्वे कराये, जिसे रखाल दास खतियान (1869 –70 ई0) कहा जाता है। 2. छोटानागपुर क्षेत्र में अंगरेजों द्वारा, अंगरेजी शिक्षा एवं धर्म को यहां के आदिवासियों के बीच अपना विचार थोपने के लिए यूरोप से चर्च को आमंत्रित किया, जो इस क्षेत्र में शिक्षा एवं स्वास्थ्य सेवा का कार्य करते हुए आयातित धर्म को श्रेष्ठ धर्म कहा और यहाँ के आदिवासियों के आस्था–विश्वास को विधर्मी कहा। जबकि धर्म का अंगरेजी समानर्थी शब्द religion से religious कहलाने के लिए एक विशिष्ट प्रकार की अवधारणा को स्वीकारना समझा जाता है, जो यहाँ के आदिवासियों के बीच अक्षुण है। (विस्तार के लिए, देखें पृष्ठ 99)।

वर्तमान झारखण्ड क्षेत्र में जी.ई.एल. ईसाई मिशनरी का आगमन सन् 1845 ई. में हुआ, वहीं रोमन कैथोलिक प्रथम मिशनरी का आगमन सन् 1868 ई० में हुआ।

शायद अंगरेजों के शासन के इस नये तरीके को छोटानागपुर क्षेत्र में पसंद किया जाने लगा। लरका आंदोलन के महानायक के शहादत के बाद, अंगरेज शासक अंगरेजी स्कूल खोलने लगे और बच्चों को अंगरेजी पढ़ाने लगे और अंगरेजी पढ़े लोगों को बाबू बनाने लगे। बीर बुधू भगत के इस गोरिला आंदोलन ने अंगरेजों के शासन का तरीका बदलने को विवस किया। सर्व प्रथम अंगरेजों ने लरका आंदोलन की नींव, पड़हा और धुमकुड़िया को कमजोर करना आरंभ किया। इस योजना के क्रम में अंगरेजों ने अमेरिकी और अफ्रिका की तरह छोटानागपुर में स्कूल एवं कचहरी खोला। वर्ष 1834 में रांची शहर में पहला स्कूल स्थापित किया गया। धीरे–धीरे अंगरेजों द्वारा चर्च की मदद से कई स्कूल खोले गये। समय बीतने के साथ वर्ष 1900 में अमर शहीद बिरसा मुण्डा का आंदोलन हुआ। लोग अंगरेज सरकार और राजशाही–जंमीदारी व्यवस्था से लड़ रहे थे। इन सबके बीच अंगरेजी समय में आदिवासी जनमानस के बीच चर्च द्वारा प्राथमिक स्कूल एवं अस्पताल भी खोला जाने लगा। अंगरेज अपनी हित में या कूटनीति में आदिवासियों के बीच अपनी धर्म–संस्कृति का प्रचार तो किये, जिसका असर यहाँ के लोगों पर पड़ा। सन् 1909 में चर्च समर्थित 'तपसंघ'' ने ईसाई आदिवासियों को अखड़ा खेलने से मना किया और अखड़ा खेलने वाले अपने लोगों पर 8 आना जुर्माना घोशित किया। इस मुहिम से उराँव समाज में ईसाई अखड़ा और सँवसर अखड़ा की खाई बन गई।

(साभार – शराब आदिवासियों का कट्टर दुश्मन, लेखक : श्रद्धेय नोअस केरकेट्टा)। इसी तरह, चर्च द्वारा शिक्षा जगाने में उराँव बहुल क्षेत्र पुराना सिसई थाना क्षेत्र में 1936 में 05 प्राथमिक स्कूल (सैन्दा, जलका, समल, सोगड़ा, दिगदोन गांव में) रोमन कैथोलिक चर्च द्वारा खोला गया जो अभी भी चल रहा है। इन नई व्यवस्था के षिक्षण केन्द्र, पौराणिक व्यवस्था के षिक्षण केन्द्र से विकसित एवं नेत्र ग्राह्य थे। कहा जाता है – आदिवासियों के बीच जो दिखता है वही चलता है और जो नहीं दिखता है, वह विलुप्त हो जाता है। पौराणिक धुमकुड़िया में लेखन कला का आभाव था, जो आधुनिक स्कूल के आने के बाद, विलुप्त होने का कारण बना। इस तरह अंगरेजी शासन में पड़हा–धुमकुड़िया कमजोर हुआ और जिस गाँव में चर्च स्थापित हुआ उस गांव में अखड़ा दो भाग में बँट गया। यह तथ्य है कि चर्च समर्थित स्कूलों से नवीन शिक्षा का प्रसार हुआ, जिससे सभी वर्ग के लोग लाभान्वित हुए।

इसी बीच संयुक्त बिहार में एक प्राकृतिक आपदा हुई, जिसका लाभ यूरोपीय मिश्नरियों को भी मिला। ज्ञात हो कि सन् 1966–67 ई0 में घोर आकाल पड़ा। इस आकाल सामय में अमेरिकन रिलिफ फण्ड आया। इसे सरकारी एजेंसियों के द्वारा वितरण करना था, पर आकाल में मददगार बनने को आये गैरसरकारी संस्थाओं ने भी हिस्सा लिया। छोटानागपुर क्षेत्र में चर्च द्वारा समर्थित संस्थाओं द्वारा वितरण का कार्य किया गया। कहा जाता है इस वितरण में चर्च द्वारा, भूख को भय से जोड़कर तथा भूखे को सेवा देकर कई जरूरत मंद लोगों को चर्च में शामिल कराने में सफल हुए।

धीरे–धीरे एक लम्बे समय अंतराल में नई शिक्षा व्यवस्था वाले शिक्षण संस्थान के सामने, पारम्परिक पाठशाला धुमकुड़िया, नहीं टिक पायी, क्योंकि आधुनिक स्कूल में नेत्र ग्राह्य शिक्षा प्रणाली अर्थात लिखने–पढ़ने का तरीका है, और यह शिक्षा प्रणाली रोजगार से जोड़ता है। ऐसी स्थिति में लोग नई व्यवस्था की ओर मुड़ने लगे। यह नई व्यवस्था, लोगों को शिक्षा और रोजगार से तो जोड़ा, पर अपनी मिट्टी की सुगंध से किनारा होने के आरोप से बच नहीं पाया। लम्बे समय काल के आदिवासी आंदोलन होते रहे और झारखण्ड राज्य का भी गठन हो गया। इधर केन्द्र सरकार एवं झारखण्ड सरकार राट्रीय शिक्षा नीति 2020 में मातृभाषा शिक्षा लगा चुकी है।

अब समय की मांग है कि है राट्रीय शिक्षा नीति के तहत गाँव में धुमकुडिया स्थापित हो तथा धुमकुड़िया के बगल में अखड़ा भी जगे, तब श्रुति साहित्य के साथ लिखित साहित्य विकसित होगा। अब आदिवासी गांव के Pre-school education शिक्षा व्यवस्था में, राज्य स्तर पर कुँड़ुख़ भाषी क्षेत्र में धुमकुड़िया को शामिल किया जाए। ऐसा होने पर समाज की भाषा और संस्कृति दोनों संरक्षित तथा सवंर्द्धित हो पाएगी।

धुमकुड़िया का पतन : क्या, कोई प्राकृतिक घटना हुई या भाषायी शोषन कारण बना ? –

क्या, प्राकृतिक घटना कारण बनी ? –

कुँड़ुख़ (उराँव) समाज में अग्नि वर्षा की कहानी है। पर यह कहानी सृष्टि कथा से जुड़ा है। क्या यह हड़प्पा– मोहनजोदाड़ो की घटना तो नहीं थी ? इसी तरह, समाज में एक कहानी दैविक प्रकोप की तरह की है, पर यह किताबों में है, जनमानस में नहीं मिलता है।

क्या, भाषायी शोषण/वैमनस्यता का कारण बना ?

आदिवासी समाज से बाहर के विद्वानों के पुस्तकों में धुमकुड़िया को युवागृह या youth dormitory के रूप में दर्शाया गया है। इन पुस्तकों में बच्चों का जिक्र नहीं है। जबकि धुमकुड़िया में बच्चों का प्रवेश 7वें वर्ष के उम्र में किया जाता था। परन्तु छोटे बच्चे सोने के लिए अपने घर वापस आया करते थे। राजा–जमींदारी के समय तथा यूरोपीय शासकों के आने के बाद आदिवासी समाज में रोटी, कपड़ा, मकान के अतिरिक्त स्वास्थ्य, शिक्षा, अध्यात्म विषय पर पुरजोर बाहरी दबाव हुआ। धुमकुड़िया में लिखित भाषा का प्रयोग न रहने से लिखित भाषा का प्रचलन बढ़ता ही गया और स्कूल, अस्पताल तथा मंदिर, मस्जिद तथा गिरजाघर का असर आदिचासी समाज पर जबरजस्त हुआ। इस तरह लिखित भाषा के प्रयोग ने आदिवासी संस्कार–संस्कृति को मशल दिया। आजकल भी आदिवासी अपने दैनिक जीवन में सभी कर्मकाण्ड वर्तमान घड़ी की विपरित दिशा में सम्पन्न करते हैं जबकि किताबों में इसकी चर्चा भी नहीं है। कर्मकाण्ड का यह तरीका आदिवासियों ने प्रकषति से सीखा और अपने वंशजों को सिखलाया। इस मुद्दे पर आधुनिक मीडिया जगत भी इसे दिखलाने एवं बतलाने में परहेज करता हैं। इसी तरह, उराँव बहुल क्षेत्रों में सादरी बोली को रातू महाराजा के क्षेत्र में शासकीय भाषा का दर्जा मिला, जिसके चलते उराँव

बहुल गावों में यह रसोई तक पहूँच गया है। बीरू राजा का क्षेत्र इसका उदाहरण है। वहाँ उराँव भाषा बोलना मना था और बोलते हुए पकड़े जाने पर दण्ड मिलता था।

समाज में धुमकुड़िया का पतन के कारण पर एक लोककथा इस प्रकार है –

पूर्व में किसी समय, धुमकुड़िया से घर लौटने के क्रम में दो बच्चों (एक ही परिवार के भाई–बहन) को दो बाघ द्वारा उठाकर ले जाया गया तथा गांव वालें के खोजबीन के बाद भी वे बच्चे नहीं मिले। तब से लोग ग्राम देवता की इच्छा का संकेत मानकर अपने बच्चों को धुमकुड़िया भेजना छोड़ दिये तथा रोःगे खेदना अनुष्ठान कर एक गांव से दूसरे गांव ते सूचना पहुंचाये। जिससे यह घटना की सूचना दूर–दराज तक पहूंच गई और धीरे–धीरे गांव–समाज में धुमकुड़िया का चलन कम होता गया। पर वर्तमान में धुमकुड़िया की आवश्यकता को देखते हुए इसे भविष्य में आने वाले खतरे से बचने के साथ पुनर्गठन करना ही होगा। अर्थात बच्चों की शिक्षा एवं उन्नति के लिए अभिभावक की जागरूकता तथा जिम्मेदारी को आवश्यक बनाना होगा। (यह उद्धरण टी०आर०आई०, रांची के पुस्तकालय की एक पुस्तक के धुमकुड़िया शीर्षक से लिया गया है।)

धुमकुड़िया का पुनर्गठन एवं सशक्तिकरण क्यों ?

वर्तमान समय में, गाँव में रह रहे लोग अपने को
कमजोर और दिशाहीन समझने लगे हैं।
क्या, हमारे पूर्वज कमजोर और दिशाहीन थे ?
क्या, हम सभी कमजोर और दिशाहीन हैं ?

इन प्रश्नों का उत्तर ढूँढ़ने के लिए हमें स्वयं से प्रश्न करना होगा – *''क्या, जिस समय हमारे पूर्वजों के पास स्कूल–कालेज, थाना–पुलिस, कोर्ट–कचहरी, मंदिर, मस्जिद, गिरजा इत्यादि नहीं पहूँचा था, उस समय हमारे पूर्वजों ने किन षक्तियों के बल पर अपने समूह को एकसूत्र में बांधकर रखा ? क्या, हमलोग उन ताकतों को संजोकर रख पाये हैं ? क्या, हम अपने पूर्वजों के धरोहरों को सुरक्षित रख पाये हैं ?*

दुनियाँ के सामने खड़ा होने के लिए हमें उन षक्तियों का सशक्तिकरण करना होगा। हम सभी के पूर्वजों ने परम्परागत आदिवासी कुँडुख़ समाज को समूह में बांधकर रखने एवं सामाजिक धरोहरों को अगली पीढ़ी तक पँहूचाने के लिए सात पहरेदार षक्तियों को चुना और उसके माध्यम से विष्व के अनेकानेक बदलाव एवं दबाव (राजनैतिक, सांस्कृतिक एवं धार्मिक) के बीच समाज को बचाकर रख पाये। धुमकुड़िया जैसी परम्परागत सामाजिक पाठशाला में प्रशिक्षित होकर धमसरका (सुसंस्कृत व्यक्ति) आल बनना ही इसका मूल उदेश्य रहा है।

ये शक्तियाँ है :–
1. अखड़ा
2. धुमकुड़िया
3. पद्दा पंच्चा (गाँव सभा/ग्राम सभा)
4. पड़हा (पड़हा–पंच्चा)
5. चाःला थान (चाःला अयंग/सरना माय)
6. देबीगुड़ी थान (देबी अयंग/गवाँ देबी)
7. बिसुसेन्दरा आदि।

परम्परागत आदिवासी समाज और इसकी व्याख्या

1. अखड़ा – अ + ख + ड़ा – अख़आ (जानना) गे खटना (शारीरिक श्रम करना) अरा सकिस्ता नु रअ़ना (मर्यादा एवं अनुशासन में रहना) अरा अख़कन एःदना दरा संगोठ नु नेवई ननना (न्याय करना) अड्डा। शारिरिक श्रम कर सीखने का स्थल एवं अनुशासन बनाये रखते हुए, समाज में न्याय के लिए निर्णय करने का स्थल। यहाँ पर त्योहार के दिन गांव का अखड़ा में 4 पीढ़ी के लोग अपनी मर्यादा के अन्दर एक साथ नाचते–गाते हैं।

2. धुमकुड़िया – (धुम–ताअ़ + कुड़िया = धुमकुड़िया)। यह गाँव की एक पारम्परिक सामाजिक पाठशाला एवं कौशल विकास केन्द्र है। प्राचीन काल से ही यह गाँव में एक शिक्षण संस्था तथा कौषल विकास केन्द्र के रूप में हुआ करता था, जो गाँव के लोगों द्वारा ही चलाया जाता था। धुमकुड़िया में बचपन से जवानी तक मानव जीवन के लिए उपयोगी ज्ञान से प्रशिक्षित होकर निखरा हुआ व्यक्ति को धमसरका आल (प्रशिक्षित एवं सुसंस्कृत व्यक्ति) अर्थात Trained Person कहा जाता था। बच्चों को खेल–खेल में गाना–बजाना–नाचना सीखलाने के लिए बुजूर्ग या दादा–दादी अपने पोते–पोतियों को बच्चों को कहा करते हैं – गुचा नतिया, धुम ताअ़ बेःचा/लगे धुम ताअ़ बेःचा। दूसरे शब्दों में कहें कि – वह पद्धति या माहौल जहां बच्चे बचपन में खेल–खेल में गाना–बजाना–नाचना सीखा करते हैं। कुड़िया का अर्थ छोटा घर अथवा केन्द्र होता है। इस प्रकार – धुम–ताअ़ + कुड़िया मिलकर धुमकुड़िया शब्द बना। दरअसल ताअ़

ध्वनि, प्रेरणार्थक क्रिया का मजही लटखु (मध्य प्रत्यय) है अथवा प्रेरणा का द्योतक है। यह मध्यम प्रत्यय, कुंडुख़ भाषा में प्रेरक अर्थात सीखलाने वाले का बोधक है। यहां धुमकुड़िया शब्द ननरकी तिंगिर'उ को सूचित करता है। इस तरह धुमकुड़िया वह है जहां बच्चे अपने जीवन के आरंभिक समय में गाना–बजाना–नाचना सीखते हुए कठिन रास्तों से गुजरकर अपने व्यक्तित्व में निखारपन लाते हैं और धीरे–धीरे धमसरका अवस्था की ओर बढ़ते हैं तथा कुड़िया का अर्थ केन्द्र या छोटा घर होता है।

इसी तरह, गांव में जब कभी नवजवान लड़के–लड़कियां अखड़ा में लय–ताल के साथ नाचते गाते हैं तो बड़े बुजूर्ग लोग, प्रशंसा करते हुए कहा करते हैं – इन्ना गा जोंखर–पेल्लर अकय दव बेःचा लगियर धुम्म–धुम्म ख़रख़ा लगिया। धुम्म–धुम्म ख़रख़ना अरा बेःचना का अर्थ – अनुशासित तरीके से नाच–गान करना। वहीं पर जब लड़के–लड़कियां अखड़ा में लय–ताल को बिगाड़ते हुए नाच–गान करते हैं, तो बुजूर्ग लोग मना करते हुए कहते हैं – नीम, नला–बेःचा बल्ला लगदर, धम्म–धुम्म ख़रख़ा लगी। यहां पर धम्म–धुम्म ख़रख़ना अरा बेःचना का अर्थ – अनुशानहीन तरीके से अथवा राग–रंग के विपरित नाच–गान करना एवं सीखना समझा जाता है। वहीं पर धुम्म–धुम्म ख़रख़ना अरा बेःचना का अर्थ – अनुशासित तरीके से नाच–गान करना एवं सीखना होता है। धुम्म–धुम्म + कुड़िया का अर्थ वैसा स्थल या केन्द्र जहां अनुशासित तरीके से नाच–गान करने एवं सीखने की गूंज उठती हो। इस तरह कहा जा सकता है कि धुम ताअ़ + कुड़िया से धुमकुड़िया षब्द बना है। बच्चा जब गाना–बजाना–नाचना सीखता है तो इसी तरह के षब्द का प्रयोग किया जाता है। इस धुमकुड़िया का धुम Pre education या Play School का परिचायक है तथा धुम में कुड़िया जुड़ने से बढ़ते उम्र के साथ Boys and girls education में परिवर्तित हो जाता है जो धुमकुड़िया ती उरूख़का, धमसरका आल (प्रशिक्षित एवं सुसंस्कृत व्यक्ति) बनता है। ठीक इसके विपरीत थमसरका आल का अर्थ सभी तरह से थका हुआ या हारा हुआ व्यक्ति या दिवालिया घोषित व्यक्ति समझा जाता है। धुमकुड़िया का शिक्षण काल दो भाग में विभक्त है – 1. जोंख़ एड़पा 2. पेल्लो एड़पा।

नोट – धुमकुड़िया प्रवेश का समय या जोंख़ एड़पा प्रवेश का समय, माघ महीना अथवा माघ पुर्णिमा तक में होता था। वहीं पेल्लो एड़पा में प्रवेश का समय हेतु उराँव युवतियाँ, सिनगी दइई पराक्रम दिवस अर्थात बैशाख पुर्णिमा के दिन किशोरी दिवस के रूप में संस्कारित होना चाहती हैं। तथ्य है कि बैशाख पुर्णिमा की चांदनी रात में, जब उराँव पुरूष वर्ग, राःजी बिसुसेन्दरा गये हुए थे, तब बैरी लोग आक्रमण किये, जिसमें हमारी उराँव महिलाएँ एवं युवतियाँ दो बार जीतीं पर तीसरी बार वे सफल नहीं हो गईं, तबतक सुर्योदय होने लगा।

3. पद्दा पंच्चा (गांव सभा या ग्राम सभा या पद्दा सबहा) – गाँव की सभा। पद्दा नू पचा ओक्कना अरा सबुती चिअ़ना दरा नेवई ननना अड्डा। पंच्चा शब्द हिन्दी भाषा का पंचनामा की तरह है, पर पंचनामा में evidence संग्रह का उदेश्य मात्र है जबकि पंच्चा समूह में evidence संग्रह के साथ **न्यायिक** प्रक्रिया भी साथ जुड़ी है।

समाज में अलग–अलग तरह का पंच्चा के नियमावली, गीत के माध्यम से बतलाया गया है –

1. बेल झंडा चोःचा गुचा सपड़ारआ।
   कन्ना बलम धरआ गुचा बिसुसेन्दरा।
   पड़हा पंच्चा चोःचा गुचा सपड़ारआ,
   बेःल पंच्चा ओक्का गुचा बिसुसेन्दरा।

2. पंच्चा भईयर बअ़दी कोय पेलो,
   पंच्चा भईयर निंगहय एन्देर ननोर
   हेओर दरा लओर कोय पेलो,
   पंच्चा भ्ईयर निंगहय एन्देर ननोर।।

3. पंच्चा ननो बारी गमय गोसोय मन्नर,
   पंच्चा ननो बारी गमय गोसोय मन्नर।
   किस्स अहड़ा मोःख़ोबाःरी लब्ब–लब्ब मन्नर,
   किस्स अहड़ा मोःख़ोबाःरी लब्ब–लब्ब मन्नर।

4. पड़हा – पड़हा का अर्थ पड़ा (टोला पड़ा) नुम पाःड़ा अरा पड़ा नुम पड़गरआ। कई गाँव वाले एक साथ मिलकर एक पड़हा का गठन किया करते है। पड़हा का कार्य – अपने कबिला समूह को बाहरी दबाव से बचाना तथा कबिलाई समाज के अन्दर अनुशासन बनाये रखना एवं पड़हा के अन्दर रक्त की षुद्धता को बरकरार रखना समझा गया है।

5. चाःला थान – (चाल चिअ़उ अयंग थान)। गाँव की विशेष दैवीय शक्ति जहाँ सरहूल के अवसर पर विशेष पूजा स्थल (सरना स्थल) अर्चना, गाँव के सभी लोगों द्वारा

मिलकर किया जाता है। चाःला थान/चाःला टोंका = चाला अयंग का स्थान।

6. देबी अयंग थान (देबीगुड़ी अयंग थान) – दव ननु मेःद मलका, अयंग छाव नु संगरा चिअ़उ सवंग। देवाँ/देव सवंग तली। देवाँ बि'ई = देबी। वैसा पूजा स्थल, जहाँ स्त्री–पुरूष, युवक–युवतियाँ, बच्चे सभी जाया करते हैं। थान = स्थल। हो भाशा में दव ननु मेःद मलका सवंग को देंवाँ कहा जाता है तथा अनिष्टकारी को दाँड़ी कहा जाता है। कुँड़ख़ में अनिश्टकारी षक्ति को नाद कहा जाता है। अंगरेजी में देव या देवाँ को Good spirit तथा नाद या दाँड़ी को Bad spirit कहा जाता है। देबी अयंग गही गुँडुरका अड्डा।

7. बिसुसेन्दरा – (बि + सु + सेन्दरा)। बसआ गे सेन्दरा/बी अरा बिहनिन सुघड़ ननना गे सेन्दरा अर्थात वंश बीज को संभालकर अगली पीढ़ी को तैयार करने के लिए सेन्दरा। रूढ़ी परम्परावादी सामाजिक व्यवस्था के अन्तर्गत बिसुसेन्दरा एक उच्चतम सामाजिक तथा न्यायिक सभा है। जब किसी मामले का निस्पादन गांव सबहा के अन्तर्गत निपटारा नहीं हो पाता है, तब वह मामला पड़हा के अन्तर्गत पहुंचता है तथा जब पड़हा के अन्तर्गत भी निपटारा नहीं हो पाने पर वह मामला पड़हा–पंच्चा या बिसुसेन्दरा में पंहुचाया जाता है। बिसुसेन्दरा, क्षेत्रीय स्तर पर 03 वर्ष में एक बार तथा राःजी बिसुसेन्दरा 12 वर्ष में एक बार होने वाला एक विशेष सबहा है जो परम्परागत कुँडुख़ समाज के अन्दर एक उच्चतम सामाजिक तथा न्यायिक बैठक के रूप में बैसाक महीने में आयोजन होता रहा है। इस बिसुसेन्दरा का निर्णय, सबों के लिए मान्य होता था और यदि जो वहां के सामाजिक निर्णय को नहीं मानता था या जो समाज हित में कलंकित पाये जाने पर, वैसे लोगों का सामुहिक सेन्दरा भी हो जाया करता था। परन्तु धीरे–धीरे वह मानव सेन्दरा प्रथा समाप्त हो गयी है। सेन्दरा का अर्थ – सोन्दओ ननना अरा रापुड़ मनना के अर्थ में व्यवहार होता है।

मनुष्य की आवश्यक आवश्यकता :–

1. रोटी 2. कपड़ा 3. मकान

विकसित मनुष्य की आवश्यक आवश्यकता :–
1. रोटी 2. कपड़ा 3. मकान 4. स्वास्थ्य 5. शिक्षा 6. अध्यात्म।

गाँव की वर्तमान समस्या के समाधान हेतु इन शक्तियों को फिर से जोड़ने एवं स्थापित करने की आवश्यकता है। आज के दौर में समाज को निम्नांकित प्रश्नों के उत्तर ढूँढ़ने होंगे :–

1. वर्तमान समय में सरकारी नौकरी पाने के लिए कुँडुख़ भाशा में परीक्षा लिखना पड़ता है। ऐसे में यदि हमारे बच्चे परीक्षा में पास नहीं करेंगे तो उन्हें नौकरी कैसे मिलेगी ? क्या, हम इसके लिए तैयार हैं ?
2. हमारे बच्चे माँ–पिताजी एवं बुजुर्गों का कहना नहीं मानते हैं, क्यों ?
3. हमारे बच्चे नशाखोरी एवं बुरी आदत की ओर जा रहे हैं, क्यों ?
4. हमारी मातृभाषा एवं नेगचार मिटते जा रहा है, क्यों?
5. हमारी परम्परा एवं पुरखों का आदर्ष कैसे बचेगा ?
6. हमारे बच्चे पढ़ाई–लिखाई में कैसे आगे बढ़ेंगे ?
7. हमें दूसरे लोग निम्नतर समझते हैं, क्यों ?
8. *अखड़ा, क्यों सूना हुआ ?*
9. *धुमकुड़िया, क्यों मिट गया ?*
10. *पड़हा, क्यों नहीं बैठता है ?*

गाँव की समस्या एवं समाधान के उपाय :–

उपरोक्त समस्या के समाधान हेतु अंतिम तीन प्रष्नों का उत्तर ढूँढ़ना ही समस्या के समाधान का द्वार खोलता है। पूर्वजों ने वर्शों के अनुभव के आधार पर यह मार्ग तैयार किया था, किन्तु हम सबों ने इसे त्याग कर भारी भूल की और अब हमें पछतावा हो रहा है। वर्तमान भूमण्डलीकरण के दौर में अपने गांव–समाज को आधुनिक व्यवस्था को अपनाने के साथ अंतिम तीन प्रष्नों के उत्तर के अनुरूप चलना पड़ेगा तभी समाधान निकलेगा।

समाधान के उपाय –

1. ग्रामसभा (पद्दा सबहा) को सबल और प्रगतिशील बनाना।
2. पड़हा को सबल और प्रगतिशील बनाना।
3. अखड़ा फिर से सजे, अखड़ा फिर से गहजे। पद्मश्री डा० रामदयाल मुण्डा जी कथन था – जे नाची से बाची।
4. धुमकुड़िया पुनर्गठित हो। ''डा0 रामदयाल मुण्डा जी कहा करते थे – अखड़ा के पास ही एक

धुमकुड़िया हो, जहाँ पुस्तकालय हो एवं दैनिक समाचार पत्र के साथ प्राथमिक उपचार की सामग्री भी हो।''

5. धुमकुड़िया से शिक्षित व्यक्ति को धमसरका आल अर्थात Trained person या कठिन मेहनत से तैयार हुआ अथवा तपकर निखरा हुआ व्यक्ति। गांव स्तर पर शिक्षा एवं स्वास्थ्य के साथ सामंजस्य स्थापित करना होगा और आज के डिजिटल युग में ऐसा संभव हो सकता है। इसके लिए वजन मषीन, डिजिटल ब्लड प्रेसर मशीन, पल्स आक्सीमीटर मशीन और थर्मामीटर आदि उपकरणों की आवश्यकता होगी। इन उपकरणो के माध्यम से थोड़ा सा प्रशिक्षण देकर लोगों को जागरूक किया जा सकता है। इस जागरूकता का फायदा जरूरतमंद लोगों को समय रहते अस्पताल पँहुचाया जा सकता है।

6. हमारे भाई–बहन अनुसूचित जनजाति प्रमाण पत्र (आदिवासी) के माध्यम से आगे बढ़ रहे हैं किन्तु जिसके सहारे वे आगे बढ़ रहे होते हैं उन सहारों को मुड़कर देख नहीं पा रहे हैं। यदि आगे बढ़े हुए लोग अपनी कमाई का एक प्रतिशत हिस्सा गाँव के धुमकुड़िया को दान करें तो षायद गाँव की समस्या का समाधान हो जाय। क्या, आदिवासी ऐसा करने की इच्छा रखते हैं ? यदि, इच्छा रखते हैं तो इस कार्य को आगे बढ़ाना ही होगा।

धुमकुड़िया के पुनर्गठन का उदेश्य :–

1. भाषा–लिपि, संस्कृति, परम्परा, रीति–रिवाज आदि की रक्षा।

2. ग्रामीण शिक्षा के माध्यम को माध्यम बनाकर वर्तमान शिक्षा की उँचाई तक पँहुचना।

3. कृशि एवं वन आधारित रोजगार उन्मुख शिक्षा।

4. सामाजिक नेतष्त्व के लिए लोगों को तैयार करना।

5. सरकार द्वारा संचालित कार्यक्रमों के प्रति लोगों में जागर्षति लाना।

6. स्वास्थ्य जनशिक्षा का प्रचार–प्रसार।

7. ग्रामीण क्षेत्रों में शिक्षा का अवसर दिलाना एवं प्रचार–प्रसार करना।

संरचना :–

धुमकुड़िया के सदस्यों के चार वर्ग निर्धारित हैं –

1. 4था वर्ष से 6ठा वर्ष तक – लेदका तूड़ (Pre Dhumkuriya age, Pre School age).

2. 7वाँ वर्ष से 12वां वर्ष तक – सन्नी तूड़ (Primery Dhumkuriya age, School age).

3. 13वाँ वर्ष से 18वां वर्ष तक – चेंड़ा तूड़ (Young Dhumkuriya, Upper School age).

4. 19वाँ वर्ष से शादी तक – कोहाँ तूड़ (Young adults Variy dhumkuriya age or College age).

जैसा कि हम सभी देख समझ पा रहे हैं कि धुमकुड़िया प्रवेश का समय 7वें वर्ष में किया जाना है परन्तु धुमकुड़िया के सामने यदि छोटा बच्चा आए तो उसे दूर नहीं किया जा सकता है। अतएव उसे Pre School या Nursery की तरह लेदका तूड़ की गिनती में रखा जाता है। आरंभिक दौर में धुमकुड़िया में लिंग भेद नहीं होता है। परन्तु जैसे–जैसे उम्र बढ़ता है वैसे–वैसे सामाजिक मर्यादा एवं जिम्मेदारी भी बढ़ती है। बड़े उम्र के लड़कियों के लिए पेल्लो एड़पा की अलग व्यवस्था होती है, जहाँ लड़कों या मर्दों का प्रवेश वर्जित किया गया है। पेल्लो, वैसे बच्चियों को कहा जाता है जिसका मासिक धर्म आरंभ हो जाता है और उसे एक समारोह के माध्यम से पेल्लो एड़पा मंक्खना (युवती गृह प्रवेश) नेग किया जाता था। बअ़नर एका कुकोय गही मईख़ना (menstruation) मनी, आ कुकोय गही जिया–कया दव रअ़ई। मई गही मईख़ना (मई गही ख़ेःस काःना) का अर्थ मासिक धर्म (महिलाओं का मासिक चक्र/मुक्क मेण्डरो) आरंभ होना है। अर्थात जिस लड्की का मासिक धर्म आरंभ होता है वह युवती स्वस्थ रहती है तथा जिसका मासिक धर्म नहीं होता है वह स्वस्थ्य नहीं रहती है।

पेल्लो एड़पा, धुमकुड़िया परिक्षेत्र में अलग से एक व्यवस्था होती थी। पूर्व में यह घर कहीं–कहीं किसी विधवा औरत के घर पर भी हुआ करता था, जिससे उस वष्द्धा को लोगों का सहारा भी मिलता था। इसी तरह लड़कियों के लीडर को पेल्लो कोटवार तथा लड़कों के लीडर को जोंख़ कोटवार कहा जाता है। कई लेखक, धुमकुड़िया को जोंख़ एड़पा अर्थात युवा गष्ह कहते हैं, पर यह सही नहीं है। धुमकुड़िया में लड़के एवं लड़कियाँ समान रूप से सहभागी हैं परन्तु पेल्लो एड़पा में उम्र के दृश्टिकोण से

एक अनुशासनात्मक अलगाव है, जो सामाजिक सुरक्षा के नियम से अनुचित नहीं है। उम्र बढ़ने के साथ जब किसी लड़के या लड़की का बेंज्जा (विवाह) निर्धारित होता है, तब उस लड़के या लड़की को धुमकुड़िया से विदाई की जाती है। यहाँ पठन–पाठन का कार्य कोहाँ तूड़ (सिनियर वर्ग) के छात्रों द्वारा किया जाता रहा है। वर्तमान में इसे एक अनुशिक्षक (Para teacher) के तौर पर किसी जानकार व्यक्ति को ग्रामसभा द्वारा चयनित किया जा सकता है। समय की मांग के अनुसार सभी सदस्यों को यह आजादी होगी कि वे षनिवार एवं रविवार को छोड़कर अपने सुविधा के अनुसार ही धुमकुड़िया में षामिल हों। अर्थात वे षनिवार एवं रविवार को आवश्यक रूप से धुमकुड़िया के कार्यक्रम में षामिल हों। धुमकुड़िया को कुछ लोगों ने युवागष्ह या अंगरेजी में Dormitory (श्यनागार) कहा करते हैं जो निश्चित रूप से नकारात्मक एवं अमान्य है, क्योंकि 18 से 40 वर्श की आयु वाले लोगों के लिए युवा षब्द का व्यवहार होता है और यह युवक–युवतियों के सोने का घर मात्र नहीं है। यह स्थान, बचपन एवं लड़कपन सँवारने का केन्द्र है। यह चेंड़ा जोंख़–पेल्लो अर्थात किशोर–किशोरी उम्र (18 वर्ष से कम वाला उम्र) वाले लोगों का व्यक्तित्व एवं कौशल विकास केन्द्र है।

बेंज्जा (विवाह) का उम्र निर्धारण के संबंध में एक गीत गाया जाता है –

12 बछरे बईनी जिया सिंगराःरा,
बईनी जिया पेल्लो मनर सपड़ाःरा।

धुमकुड़िया चन्ददो, माःघे नु पुँईदया,
बईनी जिया पेल्लो एड़पा अँड़िसया।

12 चन्ददो नू 13 मईख़ना खूःरिया,
बुझुर–बुझुर पेल्लो जिया ढूःरिया।

7 चान, माःनीम करम उबुस्त'आ,
करम डउड़न अमके किरितआ।

12 चन्ददो, 13 राःगे पाःड़ा–बेःचा परिदया,
खोंड़हा नू उज्जना–बिज्जना लूर खूःजिया।

पाँःती ओकोरआ गे, मनो चाँड़ खोंड़हा लाट,
बेंज्जेरआ खोंड़हा नुम, पंग्गे रओ पड़हा पाट।।

भावार्थ :– 12 बर्ष में बहन का मन और शरीर श्रंगार (मासिक आरंभ होना) किया। बहन का मन किशोरी होने के लिए तैयार हुआ। धुमकुड़िया चांद, माघ महीने में चढ़ा, बहन को किशोरी गृह पहूंची। जब 12 महीना में 13 बार मासिक चक्र (मईख़ना) पूर्ण हुआ तो वह अपनी सुघड़ जवानी की स्थिति समझकर मुस्कुरायी। मासिक चक्र आरंभ होने के बाद 7 वर्ष तक करम उपवास कराएँ, और इस बीच शादी के रिस्ते के लिए आया हुआ करम डउड़ा को वापस न करें। और जब 12 महीना में 13 गीत–राग बहन सीख ले तो वह समाज के अन्दर जीवन जीने के लिए तत्पर समझें। विवाह बंधन के लिए जरूरत पड़ेगा समाज का साथ। समाज के अन्दर विवाह हो तो बना रहेगा, सामाजिक मर्यादा और विश्वास।

इस सम्बन्ध में तथ्य है कि गाँव में मौसमी गाना बेमौसम नहीं गाया जाता है। यह मौसम आधारित गीत एवं राग, सूर्य के तापमान की उर्जा और आद्रता के घटने–बढ़ने के अनुसार मूड (Mood) बललता है।

पाठ्यक्रम :–

1. गीत, नृत्य–संगीत, कहानी, कविता, रीति–रिवाज, परंपरा, नेगचार आदि।
2. वर्तमान षिक्षा पद्धति का पाठ्यक्रम (कुँड़ुख़, हिन्दी, अंग्रेजी, गणित, विज्ञान, सामाजिक विज्ञान आदि)।
3. सरकार के सभी ट्रेनिंग प्रोग्राम में शामिल होना आदि।

समय :–

पारम्परिक पाठशाला एव आधुनिक पाठशाला को एक साथ जोड़ने हेतु धुमकुड़िया संचालन के लिए संध्या 6 बजे से रात्रि 9 बजे तक का समय उपयुक्त है क्योंकि संध्या वेला में खेतिबारी या आधुनिक पाठशाला से जुड़े, दोनों तरह के बच्चे समय निकाल सकेंगे। वैसे वर्तमान समय में UNICEF एवं राज्य सरकार के देखरेख में आंगनवाड़ी केन्द्र प्रत्येक गांव या कस्बा में चलाया जा रहा है, जो दिन–दोपहर में चलता है। इसलिए धुमकुड़िया के संचालन का समय निर्धारण गांव वाले युवक–युवतियाँ अपने सुविधानुसार तय कर सकते हैं।

अब राज्य सरकार की राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के अनुपालन में पूर्वशिक्षा कार्यक्रम के अन्तर्गत 4 से 6 वर्ष

के बच्चों के देखभाल या आरंभिक शिक्षा हेतु आंगनवाड़ी की तरह धुमकुड़िया के संचालन का समय निर्धारण, समाज के लोग परिस्थिति के अनुसार समय निर्धारण करें।

संचालन व्यवस्था :–

1. गाँव स्तर पर –

यह सिर्फ गाँव के युवक–युवतियों का संगठन होगा तथा इसे गांव वाले मिलकर चलाएंगे। समाज की ओर से इसके लिए एक पारा शिक्षक/अनुशिक्षक/जोंख़गढ़िया (Para teacher boys), पेल्लोगढ़िया (Para teacher girls) चुने जाएँ। सरकार, इसके संचालन में मदद करे। संचालन समूह इस प्रकार होनी चाहिए – धुमकुड़िया पचगी कोटवार, धुमकुड़िया जोंख़ कोटवार, धुमकुड़िया पेल्लो कोटवार, पेल्लो लूरगढ़िया, जोंख़ लूरगढ़िया, धुमकुड़िया सवंगिया।

2. राष्ट्रीय खुला विद्यालय से जोड़कर –

कई गांव या कई पड़हा मिलकर National Institute of Open School (NIOS) से जुड़कर धुमकुड़िया उन्मुक्त विद्यालय (Dhumkuriya Open School) चलाया जाना चाहिए, जिससे स्कूल से वंचित बच्चे तथा नवयुवक अपनी शिक्षा पूरी कर सकें अर्थात – From Dhumkuriya to Modern Education.

3. केन्द्र या राज्य सरकार की जनजातीय कल्याण विभाग एवं महिला, बाल विकास एवं सामाजिक सुरक्षा विभाग द्वारा संचालित योजना के अन्तर्गत –

प्रत्येक धुमकुड़िया के लिए एक पारा शिक्षक/अनुशिक्षक के जैसे जोंख़गढ़िया (Para teacher boys) या पेल्लोगढ़िया (Para teacher girls) का चुनाव कर आर्थिक मदद किया जाना चाहिए, जिसे गांव के संचालन समूह के देखरेख में संचालित कि या जाए। इन जोंख़ लूरगढ़िया या पेल्लो लूरगढ़िया का चयन, ग्रामसभा द्वारा 3 वर्श के लिए किया जाए तथा किसी प्रकार की गड़बड़ी पाये जाने पर ग्राम सभा द्वारा नये सिरे से चयन किया जाए। साथ ही, इससे संबंधित क्रिया–कलाप को अपने क्षेत्र के जिलाधिकारी को सूचित किया जाए।

आय के श्रोत –

1. मासिक सहयोग राषि से।
2. साप्ताहिक सहयोग राशि से। जैसे – मुठा चावल।
3. वार्षिक ग्रामीण सहयोग से।
4. सामूहिक खेती एवं वनोत्पादन से।
5. समाजसेवी संस्थाओं एवं समाजसेवियों के दान से।
6. सरकारी मदद से।

परम्परागत धुमकुड़िया में क्या सीखता है :–

1. सामाजिक जीवन जीने की कला।
2. आपसी सहयोग एवं मदईत परसी।
3. सईहा/सहिया/भाईचारा।
4. प्रकृति से लगाव एवं जुड़ाव।
5. जीयो और जीने दो का पाठ।
6. प्रकृति का संरक्षण एवं सह जीवन।
7. मौसमी राग गीत संगीत।
8. कहानी बुझवल मुहावरा।
9. खेतीबारी और सहजीविका।
10. सेन्दरा और सहजीविका।

वर्तमान गांव की आवश्यकता :–

1. प्राथमिक उपचार का साधन (First aid).
2. पुस्तकालय (Library)
3. पाठशाला (School) - परम्पारिक (Conventional) एवं आधुनिक (Modern)
4. दूरसंचार का साधन (Tele communication)
5. खेलकूद एवं मनोरंजन का साधन (Sports & entertainment)

धुमकुड़िया हेतु संसाधन की आवश्यकता :–

1. प्राथमिक उपचार का साधन (First aid) - साधारण दवाईयाँ, वजन मशीन, डिजिटल ब्लड प्रेशर मशीन, पल्स आक्सीमीटर मशीन और थर्मामीटर

2. पुस्तकालय (Library) – दैनिक समाचार पत्र, पुस्तक, पत्रिका।

3. पारम्परिक (Conventional) एवं आधुनिक (Modern) पाठशाला हेतु संसाधन।

4. दूरसंचार का साधन (Tele

communication) – रेडियो, टेलिविजन एवं इन्टरनेट।

5. खेलकूद एवं मनोरंजन का साधन (Sports & entertainment) – हॉकी, फुटबाल, क्रिकेट, तीरंदाजी तथा मांदर, ढोल, नगाड़ा, झांईझ आदि।

6. परम्परागत खेलकूद एवं सांस्कृतिक विरासत का पुनर्रावलोकन (Traditional sports & cultural rehabilitation).

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 एवं मातृभाषा शिक्षा एवं धुमकुड़िया की प्रासंगिकता –

राष्ट्रीय षिक्षा नीति 2020, देश में लग चुका है। यह झारखण्ड में वर्श 2022 से लागू है। इसके तहत आदिवासी बहूल क्षेत्र में 5 आदिवासी भाषा (कुँड़ुख़/उराँव, मुण्डा, खड़िया, हो एवं संताल) को मातष्भाशा के रूप में 1ली से 5वीं कक्षा तक पढ़ाई–लिखाई कराये जाने की योजना आरंभ की जा चुकी है। इस राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 में झारखण्ड वासियों के लिए त्रिभाशा शिक्षा (हिन्दी, अंगरेजी और मातष्भाशा) नीति को आधार बनाया गया है।

यह पाठ्यक्रम योजना 5+3+3+4 के रूप में प्रारूपित है। इसमें से प्रथम 5 को 3+2 के रूप में विस्तारित किया गया है। इन 5 में से पहला 3 वर्श का समय, पूर्वशिक्षा को सूचित करता है तथा बाद वाला 2 वर्ष, क्रमषः 1ली एवं 2री कक्षा का समय सूचक है। अर्थात अब अभिभावक अपने बच्चों को 3 वर्ष का उम्र पूरा करने के बाद सरकार द्वारा नियोजित पूर्वशिक्षा या आरंभिक शिक्षा केन्द्र में भेजेंगे, जहाँ वे नर्सरी में 1वर्श, एल.के.जी में 1 वर्ष तथा यू.के.जी में 1 वर्ष की तरह शिक्षा केन्द्र भेजा करेंगे। इस तरह उक्त 5 बर्ष तक सरकार द्वारा प्रायोजित केन्द्र में बच्चा 2री कक्षा उतीर्ण करेगा। उसके बाद 5+3+3+4 में से पहले 3 वर्श के अंतराल में बच्चे, क्रमशः 3रा, 4था एवं 5वाँ कक्षा तय करेगा तथा उक्त 5+3+3+4 में से अगले 3 वर्ष के अंतराल में बच्चा, क्रमषः 6ठा, 7वाँ, 8वाँ कक्षा तय करेगा। इसी तरह उक्त 5+3+3+4 में से अंतिम 4 वर्ष के अंतराल में बच्चा, क्रमषः 9वां, 10वां, 11वां एवं 12वां कक्षा तय करेगे। इस नई योजना में 10वाँ बोर्ड को निरस्त किया गया है। अब 10वीं के स्थान पर 12वीं बोर्ड होगा।

वर्तमान समय के ग्रामीण क्षेत्रों के अधिकतर विद्यालयों में पूर्व शिक्षा योजना हेतु 3 साले के बच्चे के लिए विषिश्ट स्कूली व्यवस्था नहीं है। तब इस नई व्यवस्था के अंतर्गत 4 वर्ष से 6वर्ष के बच्चों को आंगनवाड़ी या शिक्षा वाटिका से जोड़ने की बात कही जा रही है। इस तरह यदि पूर्व शिक्षा योजना को आंगनवाड़ी से जो जोड़ा जाता है तो यह प्रष्न उठेगा कि क्या, सभी (कुँड़ुख़/उराँव बहुल क्षेत्र) क्षेत्र के आधे से अधिक आंगनवाड़ी सेविकाएँ उक्त भाषा या लिपि नहीं जानती है। क्या, समाज के लोग इस संबंध में कोई निर्णय ले पाएंगे! अब समाज को राश्ट्रीय षिक्षा नीति 2020 एवं मातृभाषा शिक्षा योजना पर विस्तार पूर्वक विचार–विमर्श एवं निर्णय करने की आवष्यकता है।

वैसे पूर्व में सभी गाँव–टोला में अवस्थित पारम्परिक सामाजिक पाठशाला धुमकुड़िया में उराँव समाज के बच्चों को 7वें वर्ष, प्रवेश कराया जाता था। प्रत्येक माता–पिता अपने बच्चों के लिए बैठने लिए कण्डो या पिटरी, रोषनी के लिए टट्ठी और करंज तेल के साथ माघ महीने में ध ुमकड़िया पहुँचाया करते थे। आरंभिक समय में लड़के–लड़कियाँ सभी साथ–साथ उठते–बैठते तथा जीवन जीने के तरीके सीखा करते थे। उम्र बढ़ने के साथ लड़कियों का मानसिक तथा शारीरिक विकास होने के साथ जब उनका मासिक धर्म आरंभ होता था तो उन्हें पेल्लो एड़पा प्रवेष कराया जाता था। पेल्लो एड़पा में लड़को का प्रवेश वर्जित होता था। धीरे–धीरे उम्र बढ़ने के साथ शादी के लिए बातचीत तय होने पर लड़के–लडकियों को धुमकुड़िया से विदाई दी जाती थी।

इस पारम्परिक धुमकुड़िया में सुनकर बोलने तथा देखकर बोलने की कला विकसित थी, परन्तु देखकर लिखने एवं पढ़ने की कला विकसित नहीं थी, जिसके चलते पारम्परिक धुमकुड़िया, आधुनिक स्कूल का सामना नहीं कर पाया और समय की तुलना में पिछड़कर, बिछड़ गया।

इस विषय पर दिनांक 13 मार्च 2022 को सम्पन्न ''कुँड़ुख़ भाषा, शिक्षा एवं धुमकुड़िया'' विषयक कार्यशाला में मुख्य अतिथि, कार्मिक, प्रशासनिक सुधार एवं राजभाषा विभाग, झारखण्ड की प्रधान सचिव श्रीमती वंदना दादेल ने कहा – ''आदिवासियों को देश की मुख्य धारा से जुड़ने के साथ अपनी सांस्कृतिक विरासत को बचाने के उपाय पर भी कार्य करना होगा। सरकार द्वारा ''धुमकुड़िया'' निर्माण का कार्य कराया जा रहा है, पर धुमकुड़िया की आत्मा को जगाने का कार्य तो समाज के लोग ही करेंगे।'

वर्तमान परिस्थिति में निम्न प्रश्न स्वयं से करें –

1. क्या, कुँड़ुख़ समाज के लोग इस नई चुनौती का सामना करने के लिए तैयार है ?

2. क्या, पूर्व शिक्षा योजना के अन्तर्गत, उरांव बहुल क्षेत्रों में आंगनवाड़ी के स्थान पर धुमकुड़िया को

स्थापित किये जाने हेतु केन्द्र सरकार एवं राज्य सरकार से अपनी मांग रखा जाए।

3. क्या, पूर्वशाला या आंगनवाड़ी या आरंभिक शिक्षा केन्द्र की तरह धुमकुड़िया के लिए Para teacher के रूप में अनुशिक्षक एवं सरकारी पठन–पाठन सामग्री सरकारी व्यवस्था से सहायता मिलेगी ?

4. धुमकुड़िया सशक्तिकरण से गांव स्तर पर छोटे बच्चों का सामुदायिक सामाजिक शिक्षा एवं संगत का अवसर मिलेगा, जिससे वे नशापान एवं drug addiction जैसी बुरी आदत से बच पाएंगे।

धुमकुड़िया के बच्चों के लिए बड़े बुजूर्गों द्वारा मौसमी गीत–राग में सुझाव एवं उपदेश –

1. गोहला उइया काःदय भइया,
   बीःड़ी गूटी अमके उइया बुचू।।
2. बीःड़ी गूटी उयोय बिड़िना लवओ, चू,
   नड़ी कोरतेम जिया काःलो, बुचू।।

(बड़ी बहन अपने छोटे भाई से कहती है – ए छोटे भाई, तुम हल चलाने जाते हो, देर दोपहर तक हल मत चलाना। देर दोपहर तक हल चलाने से लू लग जाएगी, और लू लगने से यदि बुखार आ जाए तो प्राण निकल जाएंगे)।

चिकित्सा विज्ञान (मेडिकल सांईस) के अनुसार – लू लगने से चार प्रकार के लक्षण पाये जाते हैं – 1. Heat Cramp, 2. Heat Exhaustion 3. Heat Syncope 4. Heat Stroke. पहले तीन तरह के लक्षण का उपचार, आधुनिक तरीके से होता है, पर चौथे तरीके के लक्षण वाले मरीज का उपचार आसानी से नहीं हो पाता और इस तरह के मरीज की मृत्यु हो जाया करती है।

मौसम विज्ञान के लिए भविष्यवाणी करता हुआ यह मौसमी गीत –

1. ओर – आसारी जोत बरा लगी भइया रे,
   गोला अड्उो एलेचा लगी, रे।।
   फेर – अम्बय एलचय गोला अड्डो
   पछली बरेखा रअ़ई, रे।।
2. ओर – गुंगु निंगहएन सेवा ननय कोय,
   पछली बरेखा रअ़ई, रे।।
   फेर – असार–सावन केरा, केरा रे,
   भादो नू बरेखा रअ़ई,, रे।।
3. ओर / फेर –

पंच्चा ननो बाःरी गमय–गोसो मननय,
पंच्चा ननो बाःरी गमय–गोसो मननय।
किस्स अहड़ा मोःख़ो बारी, लब्ब लब्ब मननय,
किस्स अहड़ा मोःख़ो बारी, लब्ब लब्ब मननय।

पारम्परिक धुमकुड़िया का संचालन व्यवस्था एवं सदस्य गण –

1) नैग (पहान) कोटवार – भुँईहरी पहनई बखड़े ती।
2) महतो कोटवार – भुँईहरी महतवई बखड़े ती।
3) पुजार कोटवार – भुँईहरी पुजरई बखड़े ती।
4) जेठ रैयत कोटवार – जेठ रैयत बखड़े ती।
5) भंड़ारी कोटवार – भंडारी बखड़े ती।
6) गौंरो कोटवार – गौंरो बखड़े ती।
7) जोंख़ कोटवार – जोंख़र मझी ती।
8) पेल्लो कोटवार – पेल्लर मझी ती।
9) मुखी जोंख़ (अधेड़ उम का पुरूष प्रतिनिधि)
10) मुखी पेल्लो (अधेड़ उम्र की महिला प्रतिनिधि)
11) गांव के सभी वयस्क महिला एवं पुरूष, ग्राम सभा का सदस्य होंगे।

ग्राम : सैन्दा, थाना : सिसई, जिला : गुमला, झारखण्ड में धुमकुड़िया संचालन हेतु ग्राम सभा कर निर्णय लिया गया।

संकलन एवं आलेख
डॉ० नारायण उराँव ''सैन्दा''
दिनांक 07.12.2023

10. धुमकुड़िया कोरना उल्ला माघ पुनई नू

– डॉ० नारायण उराँव ''सैन्दा''

(बअ़नर माघ चन्ददो नु ख़द्दारिन धुमकुड़िया मंक्खा लगियर अरा ख़द्दर माघ चन्द्दो नु धुमकुड़िया कोरआ लगियर। एन्नेम माघ पुनई गे जोंख़ रअ़उर गही माघ पूरआ लगिया दरा पुना अड्डा नु मलता पुना चान नु माघ पुनई ख़ोःख़ा ती जोंख़ रअ़ना ओरे मना लगिया।)

1. धुमकुड़िया एन्दरा तली ? (धुमकुड़िया क्या है ?)

उत्तर – धुमकुड़िया, कुँड़ुख़ (उराँव) आदिवासी समाज की एक परम्पारिक सामाजिक पाठषाला है। प्राचीन काल में कुँड़ुख़ (उराँव) गांव में यह एक षिक्षण–षाला के रूप में कार्य करता था, जो गाँव के लोगों द्वारा ही चलाया जाता था। समय के साथ यह परम्पारिक ग्रामीण पाठषाला विलुप्त होने की स्थिति में है। कुछ दषक पूर्व तक यह संस्था किसी–किसी गाँव में दिखलाई पड़ता था किन्तु वर्तमान षिक्षा पद्धति के प्रचार–प्रसार के बाद यह इतिहास के पन्ने में सिमट चुका है। कुछ लेखकों ने इसे युवागृह कहकर यौन–षोषन स्थल के रूप में पेष किया, तो कई मानवषास्त्री इसे असामयिक बतलाये, किन्तु अधिकतर चिंतकों ने इसे समाज की जरूरत कहते हुए सराहना की। आदिवासी परम्परा में मान्यता है कि –

धुमकुड़िया, लयवद्ध तरीके से सामाजिक जीवन जीने की कला सीखने एवं सभी व्यक्तियों का कौषल विकास केन्द्र है। (It is a traditional social rhythmic learning system and skill development center among Oraon tribe.

कुँड़ुख़ (उराँव) आदिवासी समाज में धुमकुड़िया एक ऐसी शास्वत व्यवस्था थी जो सभी गांव एवं सभी टोला हुआ करता था, जहां गांव–टोला के सभी लड़के–लड़की बच्चे (लिंग भेद रहित) षामिल होते थे। ऐसा उदाहरण किसी भी देष या समुदाय में सामान्य रूप से नहीं दिखता है। वैसे भारतीय इतिहास में पुराने राजा–महाराजाओं के राजपाट में गुरूकुल नामक संस्था हुआ करता था, जिसमें सिर्फ शासक वर्गों के पुरूष बच्चे ही प्रवेष पाते थे। जन–साधारण के लिए वहाँ प्रवेष नहीं था अथवा वर्जित था।

2. धुमकुड़िया कोरना एन्दरा तली ? (धुमकुड़िया प्रवेष क्या है ?)

उत्तर – प्राचीन समय में, कुँड़ुख़ (उराँव) समाज में धुमकुड़िया में प्रवेष के लिए एक उम्र सीमा निर्धारित थी। गांव में बच्चे के 7वें वर्ष में धुमकुड़िया प्रवेष कराया जाता था। बच्चे के माता पिता बच्चे के बैठने के लिए चटाई, दीया जलाने के लिए करंज तेल आदि लेकर माघ महीने के षुक्ल पक्ष (बिल्ली पक्ख/इंजोरिया पक्ष) में प्रवेष कराया जाता था। बच्चे के माता–पिता द्वारा सहर्ष धुमकुड़िया से जोड़ने हेतु प्रवेष कराया करते थे।

3. माघ पूरना एन्दरा तली ? (कामगार/धांगर लोगों का तय समय पूर्ण होना क्या है ?)

उत्तर – पूर्व में, कुँड़ुख़ (उराँव) समाज में खेती–किसानी किसी दूसरे घर के नवजवान को एक खाष समय तक के लिए तथा काम के बदले आनाज या उसके समतुल्य कोई वस्तु निर्धारित देनदारी तय किया जाता था। यह एक गरीब मजबूर के जीवन बसर का एक तरीका भी था। इन कमियां लड़के का कार्यकाल माघ महीने तक तय किया जाता था। चूंकि खेतीबारी कार्य में धान कटनी–मिसनी कार्य अगहन–पूस तक समाप्त हो जाता है तथा पूस महीने में कुण्डी अरगना (हड़गड़ी) नेग होता था। अतएव इस महीने में किसी का बिदाई या अदाई नहीं किया जाता था। इस तरह खेतीबारी कार्य का एक सफल चक्र माघ महीने में पूरा होता था। इसी तरह जब किसी नये कामगार को लाये जाने या उसके अवधि ा विस्तार किये जाने का कार्य भी माघ महीने में तय कर लिया जाता था। फागुन महीने में गांव का नया दामाद तथा नया कामगार को गांव के फग्गु सेन्दरा में षिकार खेलने लिए ले जाया जाता था। फागुन पूर्णिमा को कटता था तथा दूसरे दिन चैत पइरबा को धूली हीड़ना (धूरहेंड़) होता था तथा तीसरे दिन जरजरी बेःचना (सामुहिक षिकार का रूप) के बाद करमा त्योहार तक के लिए षिकार खेलना मनाही हो जाता था। खाषकर हरियनी पूजा से करम पूजा तक जंगल से दतुन–पतई भी करना मनाही था। चैत महीने में ख़ेख़ेल बेंज्जा के बाद खेत में धान बीज डालने का कार्य आरंभ किये जाने का रिवाज था।

4. पेल्लो एड़पा एन्दरा तली ? (किषोरी गृह क्या है?)

उत्तर – धुमकुड़िया में छोटे उम्र के बच्चे–बच्चियों (कुक्कोस–कुकोय) के षिक्षण में लिंग भेद नहीं होता है। परन्तु जैसे–जैसे उम्र बढ़ता है वैसे–वैसे सामाजिक जिम्मेदारी भी बढ़ती है। बड़े उम्र के लड़कियों के लिए पेल्लो एड़पा की अलग व्यवस्था हुआ करती थी, जहाँ लड़को या मर्दों का प्रवेष वर्जित माना गया है। पेल्लो, वैसे बच्चियों को कहा जाता है जिसका मासिक धर्म शुरू हो गया हो और षारीरिक विकास

दृष्टि से एक पूर्ण नारी के गुण विकसित होने लगा हो। पूर्व में वैसे किषोरियों के लिए एक समारोह या अनुष्ठान के माध्यम से पेल्लो एड़पा मंक्खना (किषोरी गृह प्रवेष) नेग किया जाता था। यह पेल्लो एड़पा धुमकुड़िया कैम्पस में अलग से एक व्यवस्था होती थी। कहीं–कहीं यह घर किसी विधवा औरत के घर पर भी हुआ करता था जिससे उस वृद्धा को लोगों का सहारा भी मिलता था। इसी तरह लड़कियों के लीडर को पल्लो कोटवार तथा लड़कों के लीडर को जोंख़ कोटवार कहा जाता है। कई लेखक धुमकुड़िया को जोंख़ एडपा कहते हैं, पर यह सही नहीं है। धुमकुड़िया में लड़के एवं लड़कियाँ समान रूप से सहभागी हैं परन्तु पेल्लो एड़पा में उम्र के के दृष्टिकोण से एक अनुषासनात्मक अलगाव है, जो सामाजिक सुरक्षा की नियम से अनुचित नहीं है। यूं तो किषोरी गृह या पेल्लो एड़पा (किषोरी गृह) या जोंख़ एड़पा (किषोर गृह) कोई अलग–अलग घर नहीं बल्कि यह एक मानक व्यवस्था एक मानक रेखा है जो बडे उम्र के किशोर–किषोरियों के बीच एक अनुषासन बनाये रखता है।

उम्र बढ़ते के साथ जब किसी लड़के या लड़की का बेंज्जा (विवाह) निर्धारित हो जाता है, तब उस लड़के या लड़की को धुमकुड़िया से विदाई किया जाता था। यहाँ पठन–पाठन का कार्य कोहाँ तूड़ (सिनियर वर्ग) के छात्रों द्वारा किया जाना चाहिए। वर्तमान में यहां एक अनु षिक्षक (पारा षिक्षक) के तौर पर किसी जानकार व्यक्ति को ग्राम सभा द्वारा चयनित किया जा सकता है। समय की मांग के अनुसार सभी सदस्यों को यह आजादी होगी कि वे शनिवार एवं रविवार को छोड़कर अपने सुविधा के अनुसार ही धुमकुड़िया में षामिल होंगे।

5. जोंख़ एड़पा एन्दरा तली ? (किशोर गृह क्या है?)

उत्तर – जैसा कि हम सभी जानत हैं कि बच्चे–बच्चियों (कुक्कोस–कुकोय) का 7वें वर्स में धुमकुड़िया प्रवेष करवाया जाता था, परन्तु धुमकुड़िया के सामने यदि छोटा बच्चा आए तो उसे दूर नहीं किया जा सकता है। अतएव उसे Pre-nursery या Nursery की तरह लेदका तूड़ की गिनती में रखा जाएगा। छोटे उम्र के बच्चे–बच्चियों (कुक्कोस–कुकोय) के षिक्षण में आरंभिक दौर में धुमकुड़िया में लिंग भेद नहीं होता है। परन्तु जैसे–जैसे उम्र बढ़ता है वैसे–वैसे सामाजिक जिम्मेदारी भी बढ़ती है। बड़े उम्र के लड़कियों के लिए पेल्लो एड़पा की अलग व्यवस्था हुआ करती थी, जहाँ लड़को या मर्दों का प्रवेष वर्जित माना गया है। पेल्लो, वैसे बच्चियों को कहा जाता है जिसका मासिक धर्म शुरू हो गया हो और षारीरिक विकास दृष्टि से एक पूर्ण नारी के गुण विकसित होने लगा हो। पूर्व में वैसे किषोरियों के लिए एक समारोह या अनुष्ठान के माध्यम से पेल्लो एड़पा मंक्खना (किषोरी गृह प्रवेष) नेग किया जाता था। यह पेल्लो एड़पा धुमकुड़िया कैम्पस में अलग से एक व्यवस्था होती थी। कहीं–कहीं यह घर किसी विधवा औरत के घर पर भी हुआ करता था जिससे उस वृद्धा को लोगों का सहारा भी मिलता था। इसी तरह लड़कियों के लीडर को पल्लो कोटवार तथा लड़कों के लीडर को जोंख़ कोटवार कहा जाता है। कई लेखक धुमकुड़िया को जोंख़ एडपा कहते हैं, पर यह सही नहीं है। धुमकुड़िया में लड़के एवं लड़कियाँ समान रूप से सहभागी हैं परन्तु पेल्लो एड़पा में उम्र के के दृष्टिकोण से एक अनुषासनात्मक सांकेतिक अलगाव है, जो सामाजिक सुरक्षा की नियम से अनुचित नहीं है। यूं तो किषोरी गृह या पेल्लो एड़पा (किषोरी गृह) या जोंख़ एड़पा (किषोर गृह) कोई अलग–अलग घर नहीं बल्कि यह एक मानक व्यवस्था एक मानक रेखा है जो बडे उम्र के किषोर–किषोरियों के बीच एक अनुषासन बनाये रखता है।

6. धुमकुड़िया कोरना तथा पूरना उल्ला एन्दरा तली ? (धुमकुड़िया प्रवेश तथा समापन दिवस क्या है?)

उत्तर – कुँड़ुख़ समाज में सामाजिक जीवन जीने के लिए षिक्षण–प्रषिक्षण के जैसा धुमकुड़िया नामक एक सामाजिक पाठषाला हुआ करता था, जो वर्तमान में षिथिल है। यह सदियों से समाज द्वारा संचालित हुआ करता था। इसमें प्रवेष के लिए बच्चे का 7वां वर्ष उम्र सीमा होती थी। देर होने पर अधिक उम्र में भी प्रवेष होता था। इसमें प्रवेष के लिए माघ महीना निर्धारित था। इसी तरह खेती किसानी कामगार का तय समय का समापन माघ महीना ही होता था। खेती किसानी कामगारों के लिए निर्धारित समय सीमा पूरा होने की स्थिति को माघ पूरना भी कहा जाता है। इस तरह बच्चों के लिए प्रवेष दिवस तथा जो नवजवान धुमकुड़िया षिक्षा पूर्ण कर चुकने वाले के लिए समापन दिवास होगा।

7. धुमकुड़िया कोरना–पूरना उल्ला माघ पुनई गेम एन्देर गे ? (धुमकुड़िया प्रवेश–समापन दिवस माघ पूर्णिमा को क्यों ?)

उत्तर – वर्तमान समय में आधुनिक शिक्षा विकास के साथ गांव की दिषा दिनों दिन असमान्य होते जा रही है। गांव की उर्जा षहर की ओर जाकर वहीं रूक जा रही है। नतीजा यह हो रहा है कि गांव में ज्ञान का राह दिखाने वाला नहीं मिल रहा है। षहर में रहने वाले से भी उनका खतियानी निवास पूछा जा रहा है, वैसे में आदिवासी समाज करे तो क्या करे? अब समय आ गया है कि आदिवासी समाज अपने बच्चों को बचपन से ही समाज के बारे में बतलाये। कुँड़ुख़ समाज में धुमकुड़िया एक सामाजिक पाठषाला है, जो सदियों से समाज

द्वारा संचालित किया जाता रहा था। इस सामाजिक पाठषाला के द्वारा भासा तथा संस्कृति संचारित होती थी किन्तु आधुनिक पाठषाला के आने के बाद यह पम्परागत पाठषाला विलुप्ति की कगार पर है। बताया जाता है कि धुमकुड़िया प्रवेष माघ महीने में होता था तथा कामगार सेवकों की विदाई (अर्थात माघ पूरना) भी माघ महीने में ही होता था। इस तरह यदि आधुनिक स्कूल तथा षिक्षकों को साथ लेकर माघ महीने का पूर्णिमा का दिन एक उपयुक्त समय है क्योंकि माघ पूर्णिमा को सरकारी छुट्टी होती है। वैसे में गांव में रहने वाले तथा रोजगार के लिए गांव से बाहर रहने वाले, सभी गांव आकर अपने पूर्वजों के खतियानी निवास को देखा करेंगे। यही सोचकर धुमकुड़िया कोरना–पूरना उल्ला को माघ पुनई में निर्धारित किया गया है।

8. एन्देर, इन्नेलता बेड़ा नु धुमकुड़िया कोरना–पूरना उल्ला मनबअ़ना गही दरकार रअ़ई ? (क्या, आधुनिक समय में धुमकुड़िया प्रवेष–समापन दिवस मनाने का आवष्यकता है?)

उत्तर – हाँ, आवष्यकता है। केन्द्र एवं राज्य सरकार राष्ट्रीय षिक्षा नीति 2020, वर्स 2022 से लगा दी जाएगी, जिसके तहत झारखण्ड में 5 आदिवासी भाषाएं पढ़ाई जाएंगी। इस नीति के तहत स्कूल पूर्व षिक्षा की जिम्मेदारी कई राज्यों में आंगनवाड़ी केन्द्र (Anganwadi) को दिये जाने की जानकारी मिली है। यहाँ तथ्य है सभी आंगनवाड़ी सेविका आदिवासी भासा नहीं जानती हैं, वैसी स्थिति में बच्चों को एक आदिवासी भासा नहीं जानने वाले के जिम्मे बच्चों को सौंपना पड़ेगा, जो बच्चों के भविष्य के लिए हितकर नहीं है। इस स्थिति में पम्परागत सामाजिक पाठषाला धुमकुड़िया को फिर से जागृत तथा विकसित करना पड़ेगा और अभी के समय में धुमकुड़िया में श्रुति साहित्य के साथ लिखित साहित्य को पाठ्यक्रम में षामिल करना ही पड़ेगा। ऐसा करने पर गँव में रहते हुए आदिवासी भाषा पर आधारित रोजगार में भी आगे बढ़ा जा सकता है। ऐसे उदेष्य के साथ धुमकुड़िया कोरना तथा पूरना उल्ला को माघ पुनई में मनाये जाने की आवष्यकता है और हमें इस ओर आना पड़ेगा।

9. नमन धुमकुड़िया कोरना–पूरना उल्ला नु ख़द्दर गने संग्गे मनना दरकार रअ़ई का मला ? तेंग्गा ! (हम सभी को धुमकुड़िया प्रवेश तथा समापन दिवस में बच्चों के साथ शामिल रहना चाहिए या नहीं रहना चाहिए? बतलाएँ !)

उत्तर – आइये, हम सभी अपनी भाषा संस्कृति एवं रूढ़ी परम्परा की सुरक्षा तथा अपने बच्चों के जीवन संवारने में अपनी सहभागिता निभाएँ।

धुमकुड़िया, सैन्दा, सिसई, में माघ पुर्णिमा को धुमकुड़िया कोरना उल्ला (प्रवेश दिवस) सम्पन्न। इसमें गांव के आई.आई.टी. इंजिनियरिंग कर चुके युवा भी शामिल हुए।

11. धुमकुड़िया पेल्लो एड़पा महबा उल्ला

धुमकुड़िया, एक उरांव समुदाय की पारंपरिक सामाजिक पाठशाला सह कौशल विकास केन्द्र है। (Dhumkuriya is A traditional social school cum skill development center among oraon tribal society). यह धुमकुड़िया शब्द उराँव (कुँड़ुख़) भाषा के धुम ताअ़ + कुड़िया = धुमकुड़िया शब्द बना है। धुम ताअ़ में से ताअ़ शब्द खण्ड कुँड़ुख़ भाषा की शब्दावली तथा प्रेरर्णाथक क्रिया का मध्यसर्ग (मध्य प्रत्यय) है। गांव घर में अभी भी एक बुजूर्ग अपने पोते–पोतियों से कहा करते हैं – गुचा नतिया धुम ताअ़ बेःचा। यहां पर धुम ताअ़ + कुड़िया से धुमकुड़िया बना, जिसमें बच्चों के लिए बच्चे के माता पिता या बड़े बुजूर्ग ही उसके लिए प्रेरणार्थक श्रोत हुए। ऐसा माहौल या पद्धति जिसमें बचपन से खेल–खेल में गाना–बजाना–नाचना आदि सिखलाने का अनुशासन हो। कुँड़ुख़ आदिवासी समाज में धुमकुड़िया एक ऐसी शाश्वत व्यवस्था रही थी जो किसी गांव या टोला के सभी बच्चे–बच्चियों के लिए होता था। धुमकुड़िया में बचपन से युवावस्था तक मानव जीवन के लिए उपयोगी ज्ञान से प्रशिक्षित होकर निखरा व्यक्ति को धमसरका आल (trained person) कहा जाता है। वहीं पर इसके विपरितार्थक शब्द है थमसरका आल अर्थात थकाहारा, दिवालिया, अनुशासनहीन व्यक्ति। धुमकुड़िया जैसी पारंपरिक व्यवस्था में पीढ़ी–दर–पीढ़ी आदिवासी संस्कृति एवं इतिहास को निखारा जाता था।

इसी तरह से गांव में जब कभी नवजवान लड़के–लड़किया अखड़ा में लय–ताल के साथ नाचते गाते हैं तो बड़े बुजूर्ग लोग, प्रशंसा करते हुए कहा करते हैं – इन्ना गा जोंखर–पेल्लर अकय दव बेःचा लगियर धुम्म–धुम्म ख़रख़ा लगिया। धुम्म–धुम्म ख़रख़ना अरा बेःचना का अर्थ – अनुशासित तरीके से नाच–गान करना। वहीं पर जब लड़के–लड़कियाँ अखड़ा में लय–ताल को बिगाड़ते हुए नाच–गान करते हैं, तो बुजूर्ग लोग मना करते हुए कहते हैं – नीम नला–बेःचा बल्ला लगदर, धम्म–धुम्म् ख़रख़ा लगी। यहां पर धम्म–धुम्म ख़रख़ना अरा बेःचना का अर्थ – अनुशानहीन तरीके से अथवा राग–रंग के विपरित नाच–गान करना एवं सीखना समझा जाता है। वहीं पर धुम्म–धुम्म ख़रख़ना अरा बेःचना का अर्थ – अनुशासित तरीके से नाच–गान करना एवं सीखना होता है। धुम्म–धुम्म + कुड़िया का अर्थ वैसा स्थल या केन्द्र जहां अनुशासित तरीके से नाच–गान करने एवं सीखने की गूंज उठती हो। इस तरह कहा जा सकता है कि धुम ताअ़ + कुड़िया से धुमकुड़िया शब्द बना है। बच्चा जब गाना–बजाना–नाचना सीखता है तो इस तरह के शब्द का प्रयोग किया जाता है। इस धुमकुड़िया का धुम Pre education या Play School का परिचायक है तथा धुम में कुड़िया जुड़ने से बढ़ते उम्र के साथ Boys and girls education में परिवर्तित हो जाता है जो धुमकुड़िया ती उरूख़का धमसरका आल (प्रशिक्षित एवं सुसंस्कृत व्यक्ति) बनता है।

धुमकुड़िया में बालक–बालकों से युवावस्था को चार वर्गों में वर्गीकृत किया जाता था – 1. लेदका तूड़ (4–6 वर्ष), 2. चेण्ठा तूड़ (7–11 वर्ष), 3. चेंड़ा तूड़ (12–18 वर्ष), 5. कोहां तूड़ (19 वर्ष से विवाह तय होने तक)। यहां अनुशासन एवं प्रशिक्षण के लिए मुद्धा आल (monitor / chief) का चयन किया जाता था, जिसमें जोख़ मुद्धा या जोंख़ कोटवार (boys monitor) तथा पेल्लो मुद्धा या पेल्लो कोटवार (girls monitor) मुख्य होता था। इसके अलावा लूरगढ़िया (trainers) भी होते थे। यहां अनुशासन बनाए रखने के लिए नियमों का कड़ाई से पालन होता था तथा विशेष स्थिति में दंड का भी प्रावधान होता था। कहा जाता है कि किसी तूड़ समूह के एक छात्र के गलती के लिए उस समूह के सभी छात्रों को दण्ड प्रक्रिया कें अन्तर्गत एक ही तूड़ समुह में समान रूप से सबको दण्ड मिलता था। में षिक्षा प्रदान की जाती थी, जिसमें भूल–चुक होने पर उस समुह के सभी सदस्य सजा के भागीदार बनते थे। इस प्रकार वे षिक्षण के दौरान एक दूसरे को सजग रखा करते थे। धुमकुड़िया प्रवेष का समय 7वें वर्श का उम्र तय किया गया जाता है, परन्तु समय के अनुसार किसी–किसी का बाद में भी प्रवेश कराया जाता था।

बढ़ते उम्र के साथ यह किशोर तथा किशोरी समूह में यह 1. जोंख़ एड़पा तथा 2. पेल्लो एड़पा में वर्गीकृत होता है।

वर्तमान परिपेक्ष्य में धुमकुड़िया में सिखाए जाने वाले कुछ कार्य सीमित हो गए हैं जो प्राचीन काल से विवाह के लिए मानदंड भी माने जाते हैं, जैसे जोंख़ एड़पा का हल बनाना, हल चलाना, जाल बुनना इत्यादि के स्थान पर आधुनिक मशीनों व रेडिमेड वस्तुओं ने स्थान ले लिया है। वहीं पेल्लो एड़पा के विशेष कार्यों जैसे फुटकल पेड़ चढना, घर–आंगन की लिपाई–पुताई, चलकी कमना, बिण्डो कमना, इत्यादि अब सीमित हो चुके हैं। इन कार्यों के स्थान पर आधुनिक प्रशिक्षण, व्यवसायिक पाठ्यक्रम, डिजिटल माध्यम व प्रतियोगी परीक्षाओं का शिक्षण के प्रति आवश्यकता में तेज़ी से वृद्धि देखी गई है। यह जनजातीय समाज में वैश्वीकरण का प्रभाव ही है, जिस कारण आदिवासीयों की भाषा–संस्कृति, पहनावा इत्यादि में विभिन्नताएं सामने आयी हैं। वर्तमान समय में प्राचीन समय से चला आ रहा धुमकुड़िया के स्थान पर आधुनिक व्यवस्था की चीजें बलपूर्वक स्थापित हो रहीं हैं।

पेल्लो एड़पा –

सामाजिक जीवन स्तर का उन्नत सम्बन्ध, सामाजिक सम्बन्ध के आधार के ढाँचे पर टिका है। इस सम्बन्ध को और भी दृढ बनाना मानवीय समाज का ही कर्तव्य है। इस बात की शिक्षा बाल्यकाल से ही प्राप्त होने लगती है। उरांव समाज के धुमकुड़िया में, इन उच्च आदर्शों को सिखलाया जाता था। सामाजिक जीवन में सहयोग की शिक्षा, सामाजिकता की भावना, नेतृत्व के गुण, आदर्श नागरिकता, अनुशासन, मानवता के प्रति प्रेम आदि की मर्यादा आदि बातों पर धुमकुड़िया में पूर्ण रूप से ध्यान दिया जाता था। धुमकुड़िया में बहुत सी विशेषताओं को अपनाकर एक ऐसे वातावरण की तैयारी किया जाता था, जिससे थुमकुड़िया के उद्देश्य की प्राप्ति में विशेष कठिनाई नहीं हो। बुजुर्गों के कहने के अनुसार – धुमकुड़िया काफी मजबूत था। इसमें बच्चों के सर्वांगीण विकास के ऊपर ध्यान दिया जाता था। व्यक्ति तथा समाज का अन्योन्याश्रय सम्बन्ध को भी दृष्टिगत रखा जाता था तथा सामाजिक कार्य को पूर्ण रूप से प्रश्रय (महत्व) दिया जाता था।

धुमकुड़िया में जीवन को सफल बनाने के लिए ध्यान दिया जाता था – गृह कला में निपुणता, अधिक से अधिक उत्पादन कार्य में ध्यान दिया जाता था। बालिकाओं में शारीरिक, मानसिक परिवर्तन, नेतृत्व के गुण का विकास, दूसरों के प्रति सद्भावना की जागृति, एकरूपता, हृदय के अन्तर्गत प्रेम, विश्वास, धैर्य, सहनशीलता आदि आन्तरिक गुणों पर पूर्णरूपेण उदय कैसे हो और इसका सामना कैसे करना है इस पर ध्यान दिया जाता था। धुमकुड़िया सिर्फ जीवन कौशल को नहीं सिखाता था बल्कि प्रकृति के साथ समन्वय कैसे बनाये रखना है ये भी सिखलाया जाता था। ऐसे बहुत से कार्यशीलता तथा क्रियात्मक कार्य है जिन्हें सामान्य रूप से हम जंगलों, पहाड़ो, नदी–नालों, खेत–खलिहान में जाकर सीखते है ऐसा वातावरण धुमकुड़िया बनाता है। साथ ही साथ ''क्यों तथा कैसे'' के साथ सभी प्रक्रियाओं की व्याख्या धुमकुड़िया में ही सुलझाया जाता था। इस प्रकार बुर्जुग महिला के द्वारा कही गयी बातें पेल्लो एड़पा के कार्यशीलता अनेक भागों में विभाजित है।

धुमकुड़िया एवं इसके बच्चों के जीवन से संबंधी यह गीत विशिष्ट है –

12 बछरे बईनी जिया सिंगराःरा,
बईनी हिया पेल्लो मनर सपड़ाःरा।

धुमकुड़िया चन्ददो, माःघे नु पुँईदया,
बईनी जिया पेल्लो एड़पा अँड़िसया।

12 चन्ददो नू 13 मईख़ना खूःरिया,
बुझुर–बुझुर पेल्लो जिया ढूःरिया।

7 चान, माःनीम करम उबुस्त'आ,
करम डउड़न अमके किरितआ।

12 चन्ददो, 13 राःगे पाःड़ा–बेःचा परिदया,
खोंड़हा नू उज्जना–बिज्जना लूर खूःजिया।

जूःड़ी–पाँःती मना गे, चाँड़ मनी खोंड़हा लाट,
बेंज्जेरआ खोंड़हा नुम, पंग्गे रओ पड़हा पाट।।

भावार्थ :– 12 बर्ष में बहन का मन और शरीर श्रंगार (मासिक आरंभ होना) किया। बहन का मन किशोरी होने के लिए तैयार हुआ। धुमकुड़िया चांद, माघ महीने में चढ़ा, बहन को किशोरी गृह पहूंची। जब 12 महीना में 13 बार मासिक चक्र (मईख़ना) पूर्ण हुआ तो वह अपनी सुघड़ जवानी की स्थिति समझकर मुस्कुरायी। मासिक चक्र आरंभ होने के बाद 7 वर्ष तक करम उपवास कराएँ, और

इस बीच शादी के रिस्ते के लिए आया हुआ करम डउड़ा को वापस न करें। और जब 12 महीना में 13 गीत–राग बहन सीख ले तो वह समाज के अन्दर जीवन जीने के लिए तत्पर समझें। विवाह बंधन के लिए जरूरत पड़ेगा समाज का साथ। समाज के अन्दर विवाह हो तो बना रहेगा, सामाजिक मर्यादा और विश्वास।

इस सम्बन्ध में तथ्य है कि गाँव में मौसमी गाना बेमौसम नहीं गाया जाता है। यह मौसम आधारित गीत एवं राग, सूर्य के तापमान की उर्जा और आद्रता के घटने–बढ़ने के अनुसार मूड (Mood) बललता है।

जोंख़ एड़पा –

धुमकुड़िया में नवयुवकों को 12 से 15 वर्ष में एक विशेष समारोह के साथ नवयुवकों को जोंख़ एड़पा में प्रवेश कराया जाता है। यह धुमकुड़िया के बच्चों प्रोन्नत करने जैसा है। यह प्रोन्नति बच्चों के उत्तरदायित्व सौंपने के जैसा है। धुमकुड़िया में प्रवेश तथा विदाई विदाई का समय, माघ पुर्णिमा में कराया जाता है। उरांव समुदाय के पारंपरिक, सांस्कृतिक और सामाजिक कर्तव्यों की पालन करने की शिक्षा प्रदान की जाती है। उनके मानसिक शारीरिक तथा अध्यात्मिकता के विकास के लिए अनुकूल वातावरण तैयार किया जाता है। कला तथा संगीत को स्थान देकर नवयुवकों के अन्दर कलात्मक भावना के प्रति जागरूक बनाया जाता है। जोंख़ एड़पा की देखरेख गांव के बड़े–बुजुर्गों के सहयोग से ''जोख़ कोटवार'' करता है। पर्व–त्योहार, जतरा, रीती–रिवाज, सेन्दरा, विवाह आदि के अवसरों पर जोख़ आलर भागीदार बनते हैं। धुमकुड़िया के इन सदस्यों द्वारा गांव के प्रत्येक घरों से विषेश अवसरों पर उपस्थिति देखी जाती है। अनुपस्थित होने पर हर्जाना में राषि या खाद्य सामग्री दण्ड लग सकता है। सामूहिक बैठक में उनका दायित्व उभर कर आता है तथा सभी कार्यों जैसे गांव की सुरक्षा इनकी निगरानी में होता है। खेतों को तैयार करने, पक्षियों को भगाने, फसल काटने व संग्रह करने तक में इनका अहम योगदान होता है। विवाह के अवसर पर मेहमानों के लिए जोंख़ सदस्यों द्वारा ही भोजन तैयार किया जाता है। धुमकुड़िया में सिखाए जाने वाले कार्य है – कृषियंत्र – हल बनाना, जाल बुनना, कुमनी बनाना, रस्सी बनाना, तीरंदाजी, वाद्ययंत्र – मांदर, नगाड़ा बजाना, खेलकुद, नेग नियम, सेन्दरा खेलना, इत्यादि। पेल्लो एड़पा द्वारा इन्हें उपयोग के लिए प्रत्येक वर्श नई खिजुर चटाई दी जाती थी। सहनषीलता का परीक्षण सिक्का बैठाने की प्रक्रिया से समझी जाती है। प्रक्रिया में जलता बत्ती या गरम बीज, युवक के हाथ पर रखा जाता है जिसपर उसकी सहन षक्ति भविश्य की विपरीत परिस्थितियों में खरा उतरने का सूचक है। इसके बाद वह वैवाहिक जीवन में प्रवेष के लिए तैयार माना जाता है।

पेल्लो एड़पा के कार्यशीलता –

आत्म विश्वास तथा दायित्व की भावना का विकास करना – नवयुवतियां धुमकुड़िया आते ही सभी सामग्रियों को पूर्ण सावधानी से रख–रखाव करती है, विभिन्न कार्यों का दैनिक विवरण रखना, चटाई बिछावन उठाना, बत्ती जलाना, पानी का व्यवस्था करना इत्यादि। इन सभी सामुहिक कार्यों का पेल्लो कोटवार देखभाल करती है और प्रतिदिन के अनुषासन में बनाए रखती है। चटाई बनाना एवं उसका घेतला, नेठ्ठो बनाना, झाड़ू बनाना, फटे–पुराने कपड़ों से लेदरी सिलाई करना, पर्व त्योहारों में दीवारों पर लिपाई–पोताई करना व सुंदर आकृतियां बनाना, जंगल (पतरा) जाने के लिए प्रोत्साहित करना, जंगल जाकर उपयोगी चीजों को पहचानने का षैली बतलाना, साग–सब्जी मौसम आधारित किन–किन क्षेत्रों में मिलता है। सामान्य रोग हो जाने पर वनस्पतियों से उपचार इत्यादि की जानकारी देना। हस्तकला निर्माण से जैसे नई चटाई, झाड़ु, पीढा बनाकर वह विवाह घर, जोंख़ एड़पा और जरुरतमंद को देकर ''मदईत'' (सहयोग) करती थी। धान रोपाई से कटाई की प्रक्रियाओं में सहयोग, घास निकाई, चाँकोड़ व फूटकल साग तोड़कर सुखाना उसको कुटना–चलना–बनाना और साल भर के लिए संरक्षित करना, इन सभी कार्य का खास तौर पर प्रशिक्षण दिया जाता है।

प्रायोजनात्मक कार्यों मे वृद्धि –

पेल्लो एड़पा का स्वशासन बहुत ही उपयोगी प्रमाणित हुआ करता था। जब वे अनेक कार्यों को धुमकुड़िया में प्रायोगिक तौर पर सीखते थे। जिससे किशोरियों में बौद्धिक विकास के साथ स्वस्थ आदतें ग्रहण करती थी।

दृष्टिकोण का विस्तारीकरण, अवधान को एकाग्रता के साथ क्रियात्मक और रचनात्मक षक्ति की भी पूर्ण रूप से अभिवृद्धि होती है।

व्यक्तिगत तथा सामूहिक सफाई का ध्यान –

इसके अन्तर्गत धुमकुड़िया के पेल्लो एड़पा की सफाई, अखड़ा की सफाई, शरीर की सफाई, गॉव की बीमार वृद्ध–वृद्धाओं की सेवा, पीने के पानी को साफ़ बर्तन में रखना आदि भी आते है। इसके साथ गाँव की स्वच्छता के लिए गड्ढे में गोबर, सुखे पत्तों इत्यादि को फेंकना और प्राकृतिक खाद बना कर खेती में इस्तेमाल करना आदि शामिल है। महुआ पेड़ की छाल के राख का उपयोग कपड़े धोने व हाथ धोने के लिए करती थी।

सामूहिक रूप से मौसमी गीत–राग, वाद्ययंत्र सीखना, पेल्लो एड़पा में दिनचर्या पूरी कर सुर्यास्त के कुछ समय बाद थकान मिटाने के लिए साल भर अखड़ा में सामूहिक जुटान होता है। मौसमानुसार पारंपरिक गीतों, भजन और नष्त्य का अभ्यास करती है। विशेष अवसर जैसे करम, खद्दी परब, बेंज्जा समारोह पर उत्साहवर्धन के लिए वाद्ययंत्र जैसे मांदर, बांसुरी इत्यादि भी सीखती है। किसी घर में विवाह तय होने पर पेल्लो एड़पा द्वारा शुरुआत से ही सारे कार्यों में सहयोग किया जाता था। इसके लिए पेल्लो पाचोरा से अर्जी लगाई जाती थी और उनकी श्रम संतुष्टि के लिए बिरही (चंदा) के रूप में उन्हें धान, चावल, चावल गुंड़ी, मिट्टी का घड़ा या राशि दी जाती थी।

आत्मविकास व सुरक्षा की भावना –

धुमकुड़िया में बच्चियों को आत्मविकास के लिए गीत के माध्यम से ही सिखलाया जाता है। कुल्हाड़ी चलाना, तलवार चलाना, तीर चलाना, बलुवा चलाना, आदि इस तरह सिखलाया जाता था। विपरीत स्थिति और बैरी लोगों के खतरे से अपनी रक्षा स्वयं करना है, ताकि बैरी लोगे गाँव मे प्रवेश न कर सके। गुलईर–गोड़हा से सही निशान साधना, भिरयो चलाना आदि अथवा सभी साथ में आम, जामुन तोड़ते हेतु अभ्यास किया करते थे।

सामाजिक प्रकृति, घर परिवार के साथ रहना –

धुमकुड़िया में शुरू से ही समाज प्रकृति के साथ सामंजस्य बनाये रखने की सिखलाया जाता है। ग्रामीण जीवन में प्राकृतिक तथा सामाजिक चीजों में पूर्ण रूप से बच्चो में दिलचस्पी पैदा की जाती थी। बच्चियों में फूल, पौधे, वृक्ष, पक्षी, कीड़े–मकोड़े तथा जानवर आदि को पूर्ण रूप से पहचानने खास कर जो उनके क्षेत्र में पाये जाते हैं तथा उनके विशय में जानकारी भी प्राप्त कर सके। प्रकृति को समाज के साथ सम्बन्ध स्थापित करने के लिए तालाब, नहर, नदी, बांध, नाला, खेत, पहाड़ तथा झरना आदि उनका माध्यम था। बेहतर पर्यवेक्षण कर बच्चों को बतलाया जाता था। समाज के अन्तर्गत बहुत सी चीजें हैं, जैसे जमीन, फसल, वनस्पति, मवेषी, मनुश्य, बाज़ार, दुकान, पर्व–त्योहार, बीजों का संग्रह (करंज, डोरी) आदि इनके द्वारा बच्चों को सामाजिक जीवन में अभिरुचि पैदा की जाती थी। समाज में रहन–सहन, पौश्टिक आहार, आवास, वस्त्र, लेन–देन तथा खरीद– बिक्री जैसी सामाजिक व आर्थिक व्यवस्था की जानकारी दी जाती थी।

बच्चों के अन्तर्गत आनन्द का संवर्धन करना – बच्चों में आनन्द की अनुभूति बनाकर हृदय चेतना आने पर वे सीखने के लिये तैयार होते हैं। विवाह के बाद ससुराल में धुमकुड़िया में सीखाये गये नियमों का पालन कर अपने परिवार व बच्चों का लालन–पालन करती है। पीठ में बच्चे को बेतरा कर सारा कार्य करना एक दृश्ट वचन एवं सीख का ही प्रतिफल होता है। बाल्यावस्था में जो सीखते हैं, अभ्यास करते हैं ,वैसा ही बड़े होकर अपना परिवार होने पर करते हैं। तरह–तरह के खेल–कूद, उत्सव, गीत, संगीत, नृत्य आदि को बता पाते है। नवयुवतियों के अन्तर्गत संवेगात्मक, भावनात्मक मजबूती भरनी होती है, इस तरह से धुमकुड़िया में पेल्लो वर्ग को अनेक प्रकार का कलात्मक प्रषिक्षण दिया जाता है।

आरंभिक दौर में धुमकुड़िया में लिंग भेद रहित होता है। परन्तु जैसे–जैसे उम्र बढ़ती है वैसे–वैसे सामाजिक मर्यादा एवं जिम्मेदारी भी बढ़ती है। बड़े उम्र के लड़कियों के लिए पेल्लो एड़पा की अलग व्यवस्था होती है जहाँ लड़कों या मर्दों का प्रवेश वर्जित किया गया है। पेल्लो, वैसी किशोरियों को कहा जाता है जिसका मासिक धर्म शुरू हो चुका होता है और उसे एक समारोह के माध्यम से ''पेल्लो एड़पा मंक्खना'' (किशोरी गृह प्रवेश नेग) किया

जाता था। पेल्लो एड़पा धुमकुड़िया में अलग से रहने की एक व्यवस्था होती थी पूर्व में यह घर कहीं–कहीं किसी विधवा के घर पर भी हुआ करता था जिससे उस वृद्धा को सहारा भी मिलता था।

पेल्लो एड़पा मंक्खना (प्रवेश कराना) –

किशोरावस्था यानि 12 वर्ष से लगभग 18 वर्ष तक शारिरिक एवं मानसिक विकास जारी रह सकता है। तुलनात्मक रूप में लड़कियां औसत दस–ग्यारह वर्ष, लड़कों की औसत बारह–चौदह वर्श यानि लड़कियां दो वर्ष पूर्व से ही परिपक्व होना आरंभ कर देती है। ऊंचाई व वजन वृद्धि शरीर अनुसार भिन्न होती है। मासिक धर्म शुरू होने पर शरीर के हार्मोन्स का उत्पादन प्रजनन क्षमता, शारिरिक, व्यवहारिक इत्यादि बदलाव के लिए तैयार करता है। यदि 8 से 18 वर्ष तक पहुंचते भी मासिक धर्म की शुरुआत न हो तो यह असामान्य माना जाता है। कुक्कोय से पेल्लो अर्थात बालिका से किशोरी में परिवर्तित होने का समय अथवा मासिक धर्म षुरू होने के बाद वाली स्थिति के बाद ही ''पेल्लो एड़पा'' में प्रवेष कराया जाता है। धुमकुड़िया में पेल्लो को, पेल्लो एड्पा में प्रवेश और विदाई दोनों अवसर के अनुसार माध या बैसाख शुक्ल पक्ष (बिल्ली पक्ख) में तृतीया से पूर्णिमा तक कराया जाता हैं। इसे पेल्लो एड़पा का विशेष संस्कार को ''धुमकुड़िया पेल्लो एड़पा महबा उल्ला'' के रूप में भी मनाया जाता था। धुमकुड़िया के पेल्लो एड़पा में प्रवेश का समय जब कुक्कोय से पेल्लो हो जाती है अर्थात जब उसका मासिक धर्म शुरू हो जाता है तब लगभग 10 से 12 वर्ष की अवस्था में धुमकुड़िया पेल्लो एड्पा में प्रवेश करवाया जाता है। उस पेल्लो का उरांव समुदाय के सामर्थ्य के अनुसार सांकेतिक तथा सांस्कृतिक रूप से श्रृंगार किया जाता था। श्रृंगार के लिए मालारिन बुढ़िया द्वारा उनका गोदना कराना अच्छा माना जाता था। जिससे नवयुवतियों में सभी प्रकार की दुःख तकलीफों को सहन करने की क्षमता आ जाए। परिपक्व होने से कुछ समय पुर्व से ही मासिक धर्म स्वास्थ्य को लेकर सकारात्मक भावना उत्पन्न की जाती है ताकि वह सहज महसूस कर सामान्य दिनचर्या में रहे। एक रोचक तथ्य यह है कि अगर कोई किशोरी की पहली माहवारी से लेकर तीन वर्षों तक या प्रतिवर्ष माहवारी की प्रतिमाह तिथि का रिकॉर्ड रखें तो मालूम होगा कि स्वस्थ सामान्य शरीर ''बारह महीने में तेरह माहवारी चक्र'' से गुजरती है। इस प्रकार पेल्लो शरीर के परिवर्तन को बेहतर ढंग से समझ रख सकती है। धुमकुड़िया के पेल्लो एड़पा में उन्हें पेल्लो कोटवार या गांव की महिलाओं द्वारा नारित्व बदलाव एवं साफ–सफाई के प्रति जागरुक किया जाता था।

पेल्लो एड़पा मंक्खना नेग–नेग (अनुष्ठान) –

माघ/बैसाक पूर्णिमा के दिन प्रत्येक गांव में एक समारोह की तरह लड़कियों को परम्परागत रूप से कीन्दा पिटरी में बैठाकर, कीन्दा पत्ते की अंगूठी तथा कीन्दा पत्ते का चंदवा पहनाया जाता था। इसके अतिरिक्त वर्तमान में अनेक प्रकार के श्रृंगार जैसे नए वस्त्र, मौसमी फल–फुलों से सजावट, आर्थिक सक्षम होने पर आभूषण इत्यादि दिए जा सकते हैं। कहा जाता है – इस संस्कार के लिए आंगन में सखुआ पत्तल पर लड़की को बैठाकर माँ या अन्य स्त्रियां बालों में सरसों तेल लगाकर कंघी करती थीं। तत्पश्चात खुले बालों को लड़की के पिता सुंदर ढंग से खोंपा बना देते थे, जिसके मदद के लिए वहां उपस्थित माँ या अन्य दो–तीन स्त्रियां भी रहती थीं। अंत में खोंपा में गुलइची फूल एवं गेंदा फूल तथा मिंजुर टईंयाँ लगाकर सजा दिया जाता था। इसे ''मुलुर–खोंपा'' कहा जाता है। इस अनुष्ठान के बाद कोई अन्य पुरुष को उसके खोपा

को स्पर्श करने की अनुमति नहीं है। यदि जबरन किसी लड़के द्वारा इस मर्यादा का उलंघन करने पर लड़की के अभिभावक एवं समाज द्वारा सामाजिक दंड दिया जाता था। इस संस्कार में पिता की अनुपस्थिति पर पिता के भाई द्वारा या लड़की के भाई द्वारा भी पूरा किया जा सकता है। इस पारंपारिक संस्कार का यह अर्थ है कि लड़की अपने पिता या भाई द्वारा विवाह होने तक संरक्षित मानी जाती थी। वर्तमान समय में भी परंपरागत उरांव समाज में, विवाह पश्चात बइनाली (भैंसुर) नेग झरा लगता है। इस नेग में नई विवाहिता के समक्ष उसके ससुराल के परिवार में विवाहिता की पति से बड़े सभी भाइयों को आदर सहित बुलाया जाता है तथा नई विवाहिता के साथ परिचय कराया जाता है और यह वचन लिया तथा दिया जाता है कि अब वे एक दूसरे से स्पर्श होने जैसी (छुवाने जैसी) स्थिति में न आवें या विवाहिता अपने खुले बाल के साथ अपने भैंसुर के सामने न जावे अन्यथा अनुशासन तोड़ने पर फिर से बइनाली (भैंसुर) नेग झरा दण्ड देना पड़ेगा। बइनाली (भैंसुर) नेग झरा दण्ड एक प्रकार का जाने–अनजाने में रिस्तेदारी के अनुशासन टुटने का अपराध स्वीकार करना है। उरांव गांव में वर्तमान में भी भाहो–भैंसुर का नातेदारी प्रथा चली आ रही है। महिलाएं भी अपने भैंसुर के समक्ष खुले बाल नहीं रहती है अथवा सामने आने पर खोपा बनाकर या गुंथकर रखती है जो पारिवारिक तथा सामाजिक अनुषासन बनाये रखने के प्रति आदर भाव है।

अन्य राज्यों में मासिक चक्र के अनुष्ठान –

पहली माहवारी या रजोदर्शन, पेल्लो को नारित्व में बदलता है। केरल में किशोरी का मासिक धर्म की शुरूआत होने पर थिरनडुकल्याणम उत्सव मनाया जाता है, जिसमें लड़की को नारियल तेल की मालिश दी जाती है और पांच दिनों के बाद शुद्धिकरण कर नारियल के पत्तों में आभूषण उपहार दिया जाता है। असम में तुलोनी बिया नामक अनुष्ठान किया जाता है जिसमें रजोदर्शन के समाप्त होने तक गतिविधियों पर प्रतिबंध कर लड़की को अलग कमरे में रखा जाता है। जिसके बाद उसे नहलाकर दुल्हन की तरह सजाया जाता है और उसकी शादी केला पौधे से कर दी जाती है। इस दौरान सूर्य, चंद्रमा, तारों का दर्शन भी बुरा शगुन माना जाता है। तमिलनाडु राज्य में मंजल नीरट्टू विझा भव्य समारोह के रूप में मनाया जाता है। मासिक धर्म के शुरु होने पर हल्दी पानी से नहलाया जाता है। लड़कियां, पुरुषों से दूर कुडिसाई में रहती हैं और माहवारी के अंतिम दिन में रेशम की साड़ी और आभूषणों से सजाकर विवाह उम्र आह्वान के प्रतिक में उपहार दिए जाते हैं। दक्षिण राज्य कर्नाटक में प्रथम मासिक चक्र पर जनाना आधी साड़ी समारोह का आयोजन किया जाता है, लड़की उस समारोह गृह के भीतर नहीं जाती है। जिसमें पूरी सफाई होने और लड़की के स्नान कर लेने पर उपस्थित महिलाएं उसे शुभकामनाएं देती है और तोहफों में फल, साड़ी और गहने भेंट करती है। वहीं आंध्र प्रदेश और तेलंगाना में पेद्दामनिशी पंडागा का आयोजन होता है, लड़की के प्रथम चक्र आने पर अलग बिस्तर, बर्तन और पौष्टिक भोजन के साथ अलग झोपड़ी में पांच से सात दिनों तक रहती है। माता के अलावा अन्य पॉच स्त्रियाँ आखिरी दिन में मंगल स्नान कराती है और पिसा चंदन शरीर पर लगाती है, सामान्यतः लड़की अपने चाचा द्वारा भेंट की गई रेशम की साड़ी और आभूषण पहनती हैं। इस प्रकार अन्य राज्यों में विभिन्न अनुष्ठानों द्वारा लड़की के प्राकृतिक परिवर्तन में समाज द्वारा प्रोत्साहन किया जाता है।

बैसाख पूर्णिमा के दिन ही पेल्लो एड़पा में प्रवेश को अधिक ओज़पूर्ण माना जाता क्यों ?

कहा जाता है – प्रत्येक 12 वर्ष में उरांव समाज में राजी–बिसुसेन्दरा का आयोजन 01 सप्ताह के लिए हुआ करता था। इस राजी–बिसुसेन्दरा में सभी वयस्क पुरूष शामिल होते थे। गांव में पुरूषों के न रहने पर महिलाएं, पुरूष वेश में गांव की रखवाली करती थीं। कहा जाता है – इस क्रिया–कलाप को रूईहदास गढ़ के अन्दर दूध बेचने वाली ग्वालिन जानती थीं और उसी ने रूईहदास गढ़ के दुश्मनों को भेदिया के रूप में सूचना दी। उक्त रहस्य की जानकारी के बाद रूईहदास गढ़ के बैरियों ने बैसाख पूर्णिमा की चांदनी रात में चढ़ाई किया परन्तु उरांव वीरांगना बेलकुंदरी सिनगी दइई, कइली दइई और चम्पु दइई के अगुवाई में दुश्मनों की सेना दो बार परास्त हुईं। कहा जाता है – तीसरी बार लड़ाई लड़ते–लड़ते सुबह हो चुका और दिन के उजाले में महिलाएं, पुरूषों का सामना नहीं कर पायीं और खुफिया

सुरंग के रास्ते से अपने वंशजों को लेकर सुरक्षित स्थान पर चली गईं। रूईहदास गढ़ की यह लड़ई उरांव समाज में मुक्का सेन्दरा या जनी शिकार के नाम से जाना जाता है। इसी ऐतिहासिक घटना क्रम को समाज में एक ऐतिहासिक प्रेरणाश्रोत के रूप में आज भी प्रत्येक 12 वर्ष में जनी शिकार मनाया जाता है। बैसाख पूर्णिमा के दिन ही पेल्लो एड़पा में प्रवेश कराना, उरांव समुदाय के पुरुष एवं महिलाओ के माध्यम से नव युवतियों के लिए सिनगी दई, कइली दई और चम्पु दइई की स्मृति में यह एक महत्वपूर्ण संदेश है। वर्तमान में गांव की सुरक्षा, सुख–शांति के लिए उनके सद्‌गुणों को सम्मानपूर्वक अपनाने और आजीवन अभ्यासरत रहें। पुर्वजों के बताए मार्ग पर चलने की अमूल्य सीख दिया जा सकता हैं। साथ ही इसी प्रकार के कई तर्क –वितर्क देकर इस अनुष्ठान को पेल्लो एड़पा में फिर से स्थापित किया जा सके, ऐसा इस दिवस का उदेश्य है।

जनी शिकार, रूईहदासगढ़ के लड़ाई की वीरांगनाओं की स्मृति–कथा :–

रूईहदास गढ़े का हिन्दी–उर्दू नामकरण रोहतासगढ़ हुआ, जहाँ पर चढ़ाई करने के लिए सैनिकों को भेजा गया था। उन लोगों ने तीन बार रोहतासगढ़ पर चढ़ाई की थी। लुन्दरी ग्वालिन को उस राज्य का प्रत्येक क्रिया कलाप पता था। वहां का पर्व–त्योहार, रीति–रिवाज,उन सबका संचालन, प्रावधान इत्यादि उसे मालूम था। प्रतिदिन की तरह वह ग्वालित स्त्री दूध देने आती थीं। बैरियों ने उस ग्वालिन से जासूसी करवाकर सभी रहस्य जान लिया। उसने बताया कि – उराँव समाज में प्रति बारह वर्षों में राजी–बिसुसेन्दरा का आयोजन होता है। यह बिसुसेन्दरा बैसााक महीने में होता था और इस आयोजन में सभी पुरुषों को शामिल होना आवश्यक होता था। इस तरह राजी–बिसुसेन्दरा के अवसर पर गाँव–घर और पूरे राज्य में सिर्फ महिलाएँ ही होती है। यह बातें अन्य राज्य के गुप्तचरों, तक पहुँच गई। सैनिक औरतों से हारने की बात सुनकर शार्मिंदा हो गये थे। उसने यह भी बतलाया कि बैसाख पूर्णिमा की रात किले में चढ़ाई करने में आसानी होगी। सोन नदी में त्योहार के अवसर पर स्त्रियों के दोनों हाथों से चेहरा धोने को दिखाकर शत्रुओं को विश्वास दिलाया। सभी पुरुश, राजी–बिसुसेन्दरा में उपस्थित होने के लिए सुदूर जंगलों में गये हुए थे। हमलावर सैनिकों के चढ़ाई करते ही इन तीनों वीरांगनाओं ने कमान संभाली, सेनापति अगुवाई करने और लड़ने में बहादुर थी। युद्ध में अन्य बलशाली नवयुवतियों ने उल्लास और उमंग तथा जोश के साथ सिनगी, चम्पू और कईली बहनों ने साथ रखवाली करती होगी। पुरुशों का वेषधारण कर तीर–धनुश, भुरयों, तलवार, बरछा, लाठी–डंडा, समेत झोलों में पत्थरों को भरकर तथा मिर्ची की बुकनियों को लेकर ललकारती हुई लड़ाई करने के लिए सभी कूद पड़ी। पारंपरिक अस्त्र और षस्त्र लेकर परकोटे के बीचों– बीच बने मुख्य दरवाजे से निकलकर टेढ़ी–मेढ़ी पगडंडियों से नीचे उतरने लगी और वापस भागती फौज पर आगे बढ़कर पत्थर की वर्शा करने लगी। लगातार पत्थरों और तीरों की बरसात से फ़ौज में खलबली सी मच गई थी और वो तितर–बितर सी होने लगी।

सभी महिलाओं की सेना में जोष भरी नेतृत्वता सिनगी दईइ के हाथ में थी। दुष्मनों के ऊपर चढ़ते समय वे पत्थरों को ऊपर से नीचे धड़ाधड़ गिराती और मिर्ची की

पीसी बुकनियों को छींटती थी। पत्थरों की चोट से कुछ षत्रु मारे गए और कुछ घायल होकर लड़खड़ाते हुए नीचे गिरे । इस तरह तीनों बार सिनगी दईइ की सेना ने उन्हें पहाड़ से नीचे खदेड़ कर सोन नदी के पार भगा दिया। तीसरी बार दुष्मन सैनिकों को खदेड़ने के बाद उराँव सैनिक महिलाएं सोन नदी में उतरकर अपना चेहरा धोने लगी। इस क्रम में उन्होंने अपने दोनों हाथों का प्रयोग किया जो स्त्रियोचित व्यवहार था। सोन नदी के उस पार से किसी ने ग्वालिन के बताए अनुसार देखा और उन्हें पता चला कि लड़ने वाले सभी सैनिक पुरुशों की पोषाक पहने स्त्रियों की फ़ौज है। तब इन्होंने चौथी लड़ाई के लिए जबरदस्त सेना लेकर तैयारी के साथ नारा लगाते जोष भरते हुए गढ़ की ओर आए दोनों के बीच घमासान लड़ाई हुई। सिनगी दई चम्पू दई, और कइली दई ने लड़ाई में भरे जोष से नेतष्त्व की पर राज्य के सभी बच्चे–बुजुर्गों और महिलाओं की जीवन सुरक्षा के लिए खुफिया मार्ग से घने जंगलों की ओर निकल गए।

आज भी सिनगी दई के स्मषति में रोहतासगढ़ के हमले में तीन बार अपनी जीत को दर्षाने के लिए कई स्त्रियां अपने माथे में तीन खड़ी लकीर का गोदना गुदवाती है। उराँव रामाजों में आज भी प्रत्येक बारह वर्शो में बहादुर सिनगी दई की याद में जनी षिकार (मुक्का सेन्दरा) मनाया जाता है जिसमें महिलाएं अपने समुदाय के पुरुशों की तरह वेष–धारण करती है, सेन्दरा के लिए समुह में निकलती है। झारखण्ड में मनाया जाने वाला षौर्य का यह उत्सव सप्ताह भर चलता है। स्त्रियों के हाथों में परंपरागत हथियार जैसे गुलेइर, कुल्हाड़ी, डंडे, तीर–धनुश होते हैं। ये राह में दिखाई देने वाले किसी भी जंगली पषु–पक्षी का षिकार करती हैं। पहले इसे जंगलों में मनाया जाता था, वन्यजीव संरक्षण अधिनियम के कारण अब जनी षिकार में षामिल महिलाएं बस्ती के आवारा अथवा पालतू जानवरों का षिकार भी कर लेती हैं। कुँडुख समाज में जनी षिकार का प्रतीक औरतों तथा पुरुशों की बराबरी का दर्जा है। ग्रामीण आदिवासी क्षेत्रों खासकर उरांव समुदाय में मान्यता है कि जनी षिकार के बाद गांव से बुरी आत्माओं का प्रभाव दूर चला जाता है, इससे उनके परिजन बीमार नहीं होते।

वीरांगना सिनगी दइई –

उराँव (कुँडुख़) लोकगीतों एवं लोक साहित्य की लोक कथाएं, लोक कला, लोक जीवन में और कई माध्यमों में सिनगी दइई वीरांगना का जिक्र मिलता है। रोहतासगढ़ के राजा को कुँडुख़ में रुईहदा नाम से जाना जाता था, सिनगी दइई राजा रुईहदा की तीन पुत्रियों में से सबसे बड़ी पुत्री थी। राजा रुईहदा का राज्य बहुत ही समृद्ध एवं संपन्नतापूर्ण था। सिनगी दई रोहतासगढ़ की एक उराँव वीरांगना राजकुमारी थी। सिनगी दई बचपन से ही चंचल, निडर, ताकतवर और कुषाग्र बुद्धि की थी। वह अपने पिता रुईहदा को राजकाज के मामले में सहयोग करती थी। कईली दई और चम्पू दई उनकी दो बहनें थी। वे पुरुष वेश में तीनों घुड़सवारी किया करती थी, उससे उन्हें कोई भी पहचान नहीं पाता था। घुड़सवारी के दौरान वे राज्य की जनता की सुख–दुःख, उनकी जरूरतें, स्वयं देखकर जानकारी लेती थी कि कहीं से कोई घुसपैठिया न प्रवेश करे या कोई दुश्मन आक्रमण ना कर दे।

उरांव समुदाय के महिला–पुरुष वर्ग में सामंजस्य –

प्राचीनतम काल से पुरुष वर्ग अपने समुदाय की स्त्रियों को सशक्त और आत्मनिर्भर रहने पर जोर देते हैं। हल चलाने एवं बीज बोने जैसे कुछ कार्यों (महिला वर्ग के लिए निशेध) को छोड़कर पुरुष–महिला दोनों की समान

भागीदारी, आपसी सहमति से बखुबी निभाते हैं। घरेलू कार्यों जैसे बच्चों की परवरिश, जंगल जाने, खेती करने, इत्यादि भी मिल–बांटकर करते हैं ।

सेन्दरा का अर्थ –

वर्तमान उरांव समुदाय में सेन्दरा तीन प्रकार का समझा जाता है 1. फग्गु सेन्दरा, 2. मुक्का सेन्दरा एवं 3. बिसुसेन्दरा। सेन्दरा शब्द का अर्थ है – सोन्दओ ननना अरा रापुड़ मन्ना अर्थात किसी को घेराबन्दी करके काबू करना, नीचे गिराने का भाव दिखाना तथा दबाव के कारण आकारहीन, ध्वस्त होना है। फग्गु सेन्दरा, फागुन चन्दो में शुरुआत कर पुर्णिमा से चैत द्वितीया तक फग्गु सेन्दरा होता है, जिसका भाव है – खुंखार जानवरों के बीच स्वयं व कबीले की एकता एवं सुरक्षा। यह सप्ताह भर चलने के बाद फग्गु कटने के तीसरा दिन समाप्त होता है। मुक्का सेन्दरा में मुक्का महिला वर्ग को दर्शाता है, जिसमें महिलाएं रोहतासगढ़ की ऐतिहासिक घटना का स्मरण कर हर बारह वर्ष में अपने वंश–बीज को जगाने के लिए सेन्दरा के लिए निकलती है। बिसुसेन्दरा – इस शब्द बि + सु + सेन्दरा = बिसुसेन्दरा हुआ है। बि से बिहनी एवं बी समझा गया है और सु से सुघड़ कमना अरा उईना कहा जाता है। इस तरह बिसुसेन्दरा का अर्थ बी अरा बिहनिन सुघड़ कमअर उईना गे सेन्दरा। क्षेत्रीय स्तर पर हर तीन वर्ष में होता है तथा बिसुसेन्दरा का आयोजन किया जाता है तथा राजी–बिसुसेन्दरा हरेक 12 वर्ष में आयोजन होता है। कहा जाता है – बी अरा बहनी सुसर ननना गे सेन्दरा, इसका तात्पर्य है वंशबीज को परवरिश या संपोषित करने हेतु सेन्दरा समझा जाता है।

राःजी–बिसुसेन्दरा –

कृषि कार्यों के निपटने और त्योहार के बीतने के बाद हर बारह वर्ष में राजी बिसुसेन्दरा के आयोजन का समय और स्थान निर्धारित किया जाता है। पड़हा राजा के आदेष पर देवान के माध्यम से कोटवार को घोषणा करने के लिए निर्देष दी जाती है। कोटवार अपने साथ वाले पड़हा को सुचना देने के लिए डहुड़ा कुद्दना यानि आम की टहनी घुमाना, लोटे में पानी के बीच आम टहनी लेते हुए एक गांव से दूसरे गांव के लिए सेन्दरा का संदेष लेकर गांवों के दौरे पर निकलता है । कई गांव मिलकर अनसुलझे विवादों का निपटारा राजी बिसुसेन्दरा के आयोजन होने पर करते हैं। निर्धारित स्थान किसी जंगल को चुना जाता है। इसमें वर्ग प्रत्येक घर से पुरुष सम्मेलन में भाग लेते हैं। पड़हा की कार्य प्रणाली पुर्णतयाः स्पष्ट है कि पारंपरिक सामाजिक और प्रशासनिक व्यवस्था को बरकरार रखना है। पद्दा पचोरा (ग्राम सभा) का आयोजन कई अवसरों पर होता है। जब किसी मामले को ग्राम सभा में फैसला नहीं हो पाता है या किसी पक्ष को अमान्य हो वह पक्ष अपील के लिए पारम्परिक रूप से संचालित पड़हा बेल अथवा पड़हा राजा के समक्ष प्रस्तुत करता है। जब पड़हा का फैसला भी किसी को अमान्य हो तब वह पड़हा पंच्चा के लिए मदईत पड़हा के अन्तर्गत पड़हा बेल का चुनाव स्वयं पक्षकार को करना पड़ता है। पंच्चा पड़हा का फैसला के बाद बर्तमान समय में वह व्यक्ति न्यायालय में अपील करने के लिए स्वतंत्र होता है। वैसे उरांव समाज में बिसुसेन्रा एक उच्चतम व्यवस्था है और समाज का नियम–कानुन बनाने का जिम्मा बिसु सेन्दरा को ही है। इस बिसुसेन्दरा में पारित नियमों का पालन समाज के लोगों को करना होता है। उरांव समाज द्वारा पारित नियमावाली एक पीड़ित एवं निर्बल व्यक्ति को तीन सीढ़ीयों में न्याय मिलता है जो पद्दा सबहा, पड़हा सबहा और मदईत पंच्चा पड़हा सबहा है। पड़हा के अन्तर्गत दस से पंद्रह गांव आते हैं। किसी एक गांव को राजा गांव की उपाधि दी जाती है जिन्हें पंचगण के सहायता द्वारा पड़हा के संचालन की सामाजिक जिम्मेदारी सौंपी जाती है। यदि किसी मामले का निपटारा पड़हा स्तर पर न सुलझे तो वह मदईत पंच्चा पड़हा स्तर पर पहुंचता है जिसमें पारंपरिक तौर से पड़हा संचालन करनेवाले पंच के अलावा पड़हा गांव के सदस्यों की मदईत ली जाती है।

वर्तमान समय के बिसुसेन्दरा में महिलाओं की भगीदारी क्या और कैसे हो ?

ऐतिहासिक कथा–कहानियों से पता चलता है कि 12 वर्ष में लगने वाला राजीबिसु सेन्दरा के अवसर पर रूईहदास गढ़ के उरांव लोग घर से बाहर जाया करते थे और गांव एवं किला का देखरेख, महिलाएं पुरूष वेश में किया करती थीं। कहा जाता है दुश्मनों की फौज ने इसी अवसर लाभ लिया और चांदनी रात में चढ़ाई किया, पर वे दो बार महिलाओं द्वारा भगाये गए और तीसरी बार दिन के

के उजियाले में गुरिला लड़ाई का भेद खुलते ही अपने बाल–बच्चों के साथ सुरक्षित स्थान की ओर चले गए।

वर्तमान समय के बिसुसेन्दरा में अंतिम दिन महिलाओं को भी शामिल किया जाना चाहिए, जैसा कि पूर्व में महिलाएं गांव में परछाती थीं। अंतिम दिन महिलओं की उपस्थिति में पुरूषों द्वारा समाज के लिए चिंतन मनन की जानकारी दिये जाने से निश्चित रूप से महिला और पुरूष, दोनों इस सामाजिक चिंतन स्थल में जुड़ाव महशूस करेंगे। वैसे पूर्व में बिसुसेन्दरा जंगल के बीच होता था। पर अब जंगल की कटाई के बाद बिसुसेंन्दरा गांव क्षेत्र में हो रहा है। इसलिए गांव स्तर पर तीन दिवसीय बिसुसेन्दरा के ंतीसरे अंतिम दिन महिलएं भी शामिल होती हैं।

रूईहदास क्षेत्र (रोहतासगढ़, बिहार) की पौराणिक गाथा संस्कृत साहित्य–ग्रंथों में –

बाल्मिकी रामायण के बालकांड, श्लोक संख्या 24 एवं 31 इस प्रकार कहा गया है – ''मलद और करूष नामक ये दोनो जनपद दीर्घकाल तक समृद्धिशाली धन–धान्य से सम्पन्न तथा सुखी रहे हैं।''।।24।। – ''यह देश ऐसा रमणीय है तो भी इस समय कोई (आर्य) यहां आ नहीं सकता है। मेरी (मुनि विश्वामित्र) आज्ञा से तुम (राम लक्षमण) इस देश को पुनरू निष्कंटक बना दो।।।31।। देवी भागवत पुराण में भी इस आशय का वर्णन है। संभवतः संस्कृत साहित्य का यह मलद और करूष जनपद मुण्डा और कुड़ख़ जनपद रहा हो। भाषा विज्ञान की पुस्तकों में यह बतलाया गया है कि संस्कृत भाषा की देवनागरी लिपि में ड़ तथा ख़ ध्वनि नहीं है। ऐसी स्थिति में कुडुख़ प्रदेश को करूष प्रदेश ही बोला हो। (भाशा विज्ञान) ही ढचर तुरू तिखड़ाचका ती पता लग्गी का संस्कृत पुथी ता आ करूश देष, कुडुख़ देष दिम रहचा होतंग अरा मलद देश, मुण्डा देश दिम। एन्देर गे का संस्कृत नु 'ख़' अरा 'ड़' हहस मल्ला। संस्कष्त मधेर कुडुख़ बआ पोल्लर दरा कुरूष बअ़नुम करूष देश बाःचर। अक्कुन ता बेड़ा नु हूँ अबड़र ड़ ही अड्डा नू र बअ़नर अरा ख़ ही अड्डा नू श बेसे बअ़नर।

भारत सरकार, भारतीय पुरातत्व विभाग की नजर में रूईहदास गढ़ –

भारतीय पुरातत्व विभाग गही नोटिस बोर्ड नू लिखिचका रअ़ई का – ''रूईहदास गढ़े नु हिन्दु बेःलर ती मुन्ध आदिवासी बेःलर रहचर। आदिवासी बेःलर नु मुन्ध नु खेरवार बेःलर, तसले उराँव (कुँडुख़) बेःलर, तसले चेरो बेःलर गढ़े नु राःजी चलाबाःचर। चेरो बेःलर ही अक्कुन जाःका पलामु (झारखण्ड) नु चेरो गढ़े रअ़ई। चेरो बेःलर ती हिन्दु बेःलर बच्चियर। अदि ख़ोःख़ा नु हिन्दुर बेःलर ती मुगल बेःलर होच्चर। तसले मुगल बेःलर ती अंगरेज सरकार दरा अंगरेज सरकार ती भारत सरकार दबी नंज्जा।'' एन्ने गोवाही भारत सरकार ही पुरातत्व विभाग तरती चिपिरका र'ई।

दुनियाँ के इतिहास में शक्तिशाली देश के सामने जनी शिकार जैसी परिस्थिति –

दिनांक 07.10.2023 को रात में इजराईल की जनता म्यूजिक फेस्टिवल मना रही जनता पर सुबह–सुबह, अचानक कई हजार रॉकेट से हमला हुआ। आधुनिक समय में शक्तिशाली कहलाने वाला देश की जनता इस हमले में अनायाश ही मारी गईं। भले ही बाद में देश की सेना द्वारा मोर्चा सम्हाला गया हो, पर समाज के सामने वह विरोधी खेमा की साजिश अथवा चतुराई हमेशा ही चुभता रहेगा।

शोध एवं संकलन –

– डॉ० बैजयंती उरांव (पी.एच.डी, गृह विज्ञान)।
– भुनेश्वर उरांव (पी.एच.डी,शोधार्थी,कुँडुख़)।
– नीतु साक्षी टोप्पो (एम.एस.सी,बायोटेक्नोलॉजी)

संदर्भ सूची–

1. भगत राम किषोर, वीर पानी विषेश षोधात्मक पुस्तक वीर पानी प्रकाषन।
2. कुँडुख़ टाईम्स, धुमकुड़िया महबा विशेषांक, अंक 05 अक्टूबर से दिसम्बर 2022.
3. मीणा हरिराम, आदिवासी दर्शन और समाज, राजस्थान हिन्दी ग्रंथ अकादमी।
4. राधा प्रसाद,अनुकुलित पाठ्यक्रम की रणनीति, श्री अजन्ता प्रेस लिमिटेड पटना – 4.
5. रोहतासगढ़ किला भ्रमण 2023 जनवरी 4 (प्राथमिक स्त्रोत)।
6. रम्परागत पड़हा ग्रामसभा बिसुसेन्दरा

*****

12. (कुँड़ुख़ तोलोङ सिकि तोːड़पाब)
Tolong Siki Alphabet / तोलोङ सिकि वर्णमाला

(सरह तोड़) = स्वर वर्ण (Vowels)

इ i एe उ u ओ o अ a आ ā

ː (सेला) = लम्बी ध्वनि, ˙ (मितला) = नासिक्य व्यंजन सूचक, ’ (घेतला) = शब्दखण्ड सूचक, ~ (एवाँ) = नासिक्य स्वर सूचक, ‿ (रेवाँ) = लुप्ताकार र, । (हेचका) = विकारी अ

(हरह तोड़) = व्यंजन वर्ण (Consonants)

प् p	फ् ph	ब् b	भ् bh	म् m
त् t	थ् th	द् d	ध् dh	न् n
ट् ṭ	ठ् ṭh	ड् ḍ	ढ् ḍh	ण् ṇ
च् ch	छ् chh	ज् j	झ् jh	ञ् n̈
क् k	ख् kh	ग् g	घ् gh	ङ् ṅ
य् y	र् r	ल् l	व् w	ज़् ż
स् s	ह् h	ख़् x	ड़् ṛ	ढ़् ṛh

(लेक्खा) = संख्या, Numerals

0	1	2	3	4	5	6	7	8	9	10

(ख़द्दर ही कत्थ लूर अरा कत्थ बेयाँख़ो) = बच्चों का भाषा ज्ञान और भाषा विज्ञान

(पा), (बा), (मा), (ता), (दा), (ना), (का), (गा), (जा),

(पपा) = रोटी, (बबा) = पिताजी, (ममा) = Cooked rice, भात।

(पल्ले) = दाँत, (बई) = मूँह, (मेलख़ा) = Epiglottis, उप कण्ठ।

(ततख़ा) = जीभ, (दुदु) = दूध, (नरटी) = Oesophagus, ग्रासिका।

ताːका एमसाːर’ई, पल्ले, बई, मेलख़ा, होलेम चींःख़नर ख़द्दर।

ततख़ा, दुदहिन, नरटी तरा तईयी, होलेम उज्जनर ख़द्दर।।

(कुडुख़ भाषा, संस्कृति, सामाजिक एवं प्राकृतिक अवदान तथा भाषा, विज्ञान आधारित लिपि)

13. कुँड़ुख़ तोलोंग सिकि (लिपि) का मूल आधार है आदिवासी जीवन–दर्शन

तोलोंग सिकि एक वर्णात्मक लिपि है। इससे, उच्चारण के अनुसार लिखा एवं पढ़ा जाता है। इसमें हलन्त का प्रयोग नहीं होता है। इस लिपि को कुँड़ुख़ भाषियों ने, कुँड़ुख़ भाषा की लिपि की सामाजिक स्वीकृति प्रदान की है तथा झारखण्ड सरकार द्वारा कुँड़ुख़ भाषा की लिपि की वैधानिक मान्यता देकर, विद्यालयों में पठन–पाठन का अवसर प्रदान किया गया है। कुँड़ुख़ भाषा एक योगात्मक भाषा है। बोलचाल में, योगात्मक तरीके से खण्ड–ब–खण्ड उच्चरित किया जाता है। इस लिपि के अधिकतर वर्ण वर्तमान घड़ी के विपरीत दिषा (anti clockwise) में व्यवस्थित है। इस लिपि का आधार पूर्वजों द्वारा संरक्षित, प्रकृतिवादी सिद्धांत है। हवा का बवण्डर (बईर'बण्डो), समुद्र का चक्रवात, अधिकांश लताओं का चढ़ना आदि प्राकृतिक चीजें, घड़ी की विपरीत दिशा में सम्पन्न होती है। प्रकृति के इन रहस्यों को, आदिवासी पूर्वजों ने अपने जीवन में उतारा और जन्म से लेकर मृत्यु तक के अनुष्ठान, घड़ी की विपरीत दिषा में सम्पन्न करने लगे। हल चलाना, जता चलाना, छिरका रोटी पकाना, अभिवादन करना, नृत्य करना, चाःला टोंका की पूजा करना, देबी अयंग स्थल की पूजा विधि, डण्डा कट्टना अनुष्ठान आदि क्रियाएँ घड़ी की विपरीत दिशा में निहित है। खगोलीय तथ्य है कि संसार में, अधिक से अधिक प्राकृतिक घटनाएँ घड़ी की विपरीत दिषा में ही सम्पन्न होती है। ब्रह्मांड में पृथ्वी द्वारा सूर्य के चारों ओर घड़ी की विपरीत दिषा में परिक्रमा किये जाने से प्रकृति के सभी क्रिया–कलाप इससे प्रभावित होती हैं। इन प्राकृतिक क्रिया–कलापों एवं सामाजिक सह सांस्कृतिक अवदानों को आदिवासी पोषाक तोलोङ की कलाकृति से जोड़कर, भाषाविज्ञान के सिद्धांत पर यह लिपि स्थापित है।

– डॉ॰ नारायण उराँव 'सैन्दा' (तोलोंग सिकि विषयक शोध–अनुसंधान) :

तोलोङ सिकि (लिपि) का आधार

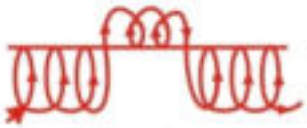

तोलोङ पोशाक

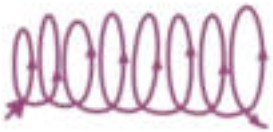

हल–चलाना

चाला अयंग अड्डा

जता चलाना

रोटी पकाना

नृत्य

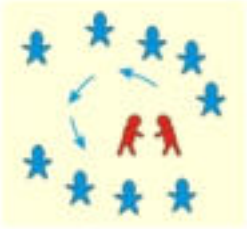

अभिवादन

जीव–जन्तुओं द्वारा बनाये गये चिन्ह

मृत्यु संस्कार

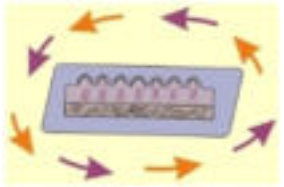

देवी अयंग अड्डा

पृथ्वी की सूर्य परिक्रमा

लत्तर का डाली पर चढ़ना

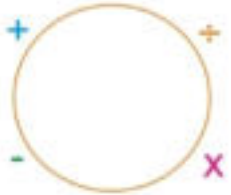

गणितीय चिन्ह

डण्डा कट्टना अनुष्ठान

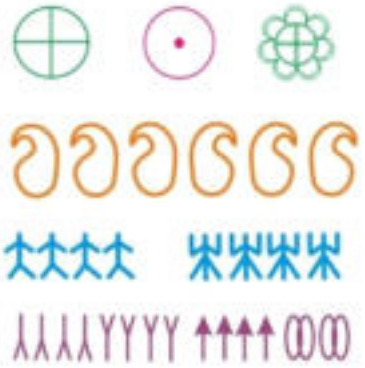

सांस्कृतिक एवं धार्मिक अनुष्ठान चिन्ह

सिन्धु लिपि (Indus Script)

डण्डा कट्टा डिसप्ले सिस्टम

तोलोङ सिकि (लिपि) : आदिवासी भाषा, संस्कृति, रीतिरिवाज, परम्परा, विज्ञान एंव आध्यात्म का अद्‌भूत प्रस्तुतिकरण

15. नई लिपि की परिकल्पना एवं लिपि विकास का महत्वपूर्ण घटनाक्रम

. .....वर्ष 1989 में जिस समय डॉ0 नारायण उराँव, दरभंगा मेडिकल कॉलेज, लहेरियासराय (बिहार) में एम.बी. बी.एस. की परीक्षा पास कर इंटर्नशीप कर रहे थे। उनका इंटर्नशीप अवधि फरवरी 1989 से फरवरी 1990 तक था। उस समय उन्होंने आदिवासी समाज के कई सामयिक प्रष्नों के प्रत्युत्तर में एक पुस्तक लिखी, जिसका नाम है – सरना समाज और उसका अस्तित्व। इन्टर्नशीप के दौरान ही उन्होंने वर्ष 1989 में ही उक्त पुस्तक का प्रकाशन करवाया। इस पुस्तक के लेखन एवं प्रकाशन के मध्य नई लिपि की आवश्यकता एवं उपयोगिता महशूस हुई। इस पुस्तक को लिखते समय उनके मन में कई प्रश्न उठे – 1. साधारणतया लोग आदिवासियों को छोटी जाति और कमजोर क्यों समझते है ? 2. ऊँची जाति कहलाने वाले लोग कौन हैं और उनकी पहचान क्या है ? 3. आदिवासी लोग, मानसिक कुण्ठा का शिकार क्यों हो जाते हैं ?

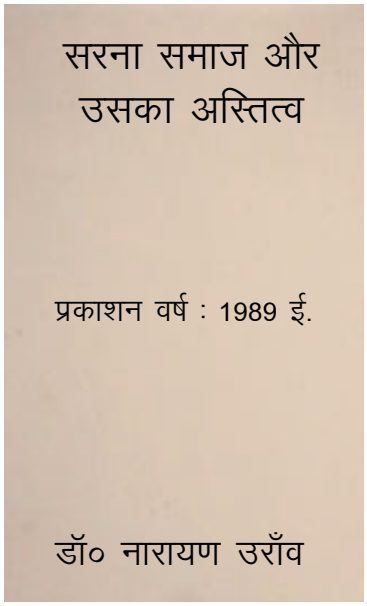

इन ग्रंथियों को दूर करने के लिए यह जानना आवश्यक था कि आदिवासियों को छोटा समझने वाले लोग कौन हैं और उनकी पहचान क्या है ? कहीं, यह सामंतवादी ताकत का असर तो नहीं ? दूसरी ओर यह तथ्य है कि आदिवासी समाज के पास अभी भी बहुत सारे ज्ञान भण्डार हैं, जिसे पूरी दुनियाँ को बतलाया नहीं जा सका है। जिस दिन इस ज्ञान उर्जा को संचित एवं विकसित कर विकसित समाज के समक्ष रखा जाएगा, उसी दिन यह हीन ग्रंथि हम सभी से दूर होगी।

इस उधेड़बुन में अस्पताल में कार्य करते हुए उनका ध्यान दो चीजों पर पड़ा –
1. माला डी – गर्भ निरोधक गोली की पर्ची।
2. 100 रूपया का नोट।

(इसमें कई लिपियों में एक ही नाम को अलग–अलग तरीके से लिखा हुआ था। इसे देखकर उनका हृदय रोमांचित हो उठा और सदियों से पीढ़ी दर पीढ़ी चले आ रहे आदिवासी भाषा एवं सांस्कृतिक धरोहर को बचाने की कड़ी की माला में एक फूल पिरोने का कार्य आरंभ किया।
ईश्वरीय प्रेरणा से उनको आभास हुआ कि यदि आदिवासियों की भाषा की भी अपनी लिपि होती तो इन पर्चियों में आदिवासियों की भाषा भी दर्ज होती।)

**''वर्ष 1989 में मेरी एक पुस्तक ''सरना समाज और उसका अस्तित्व'' दरभंगा, बिहार से प्रकाशित हुई। इस पुस्तक के छपते–छपते तथा अस्पताल में कार्य करते हुए मेरे मन में एक विचार आया कि यदि हमारी भाषा की भी लिपि होती तो हमलोग भी अपनी भाषा की लिपि के माध्यम से किताबें छापते। यह विचार मेरे मन में बैठ गया और अपनी डायरी में अनायास ही कुछ आकृतियाँ बनाने लगा और 6 महीने के जद्दोजहद से एक वर्णमाला तैयार किया, परन्तु इसे समाज के सामने लाने में हिचकिचाहट थी। ये बातें किताब के रूप में आगे नहीं बढ़ पाया। मैं अपने रोजगार की तलाश में जुड़ गया और 06 नवम्बर 1990 को चिकित्सा पदाधिकारी के रूप में बिहार सरकार, स्वास्थ्य विभाग में योगदान दिया। इस तरह 1990 का अधिकतर समय अपने रोजगार प्राप्ति में बिता, किन्तु समय निकालकर कुँड़ुख़ भाषा की लिपि विषय पर कार्य कर लिया करता रहा।'' – डॉ० नारायण उराँव, डी.एम.सी.एच. लहेरियासराय।

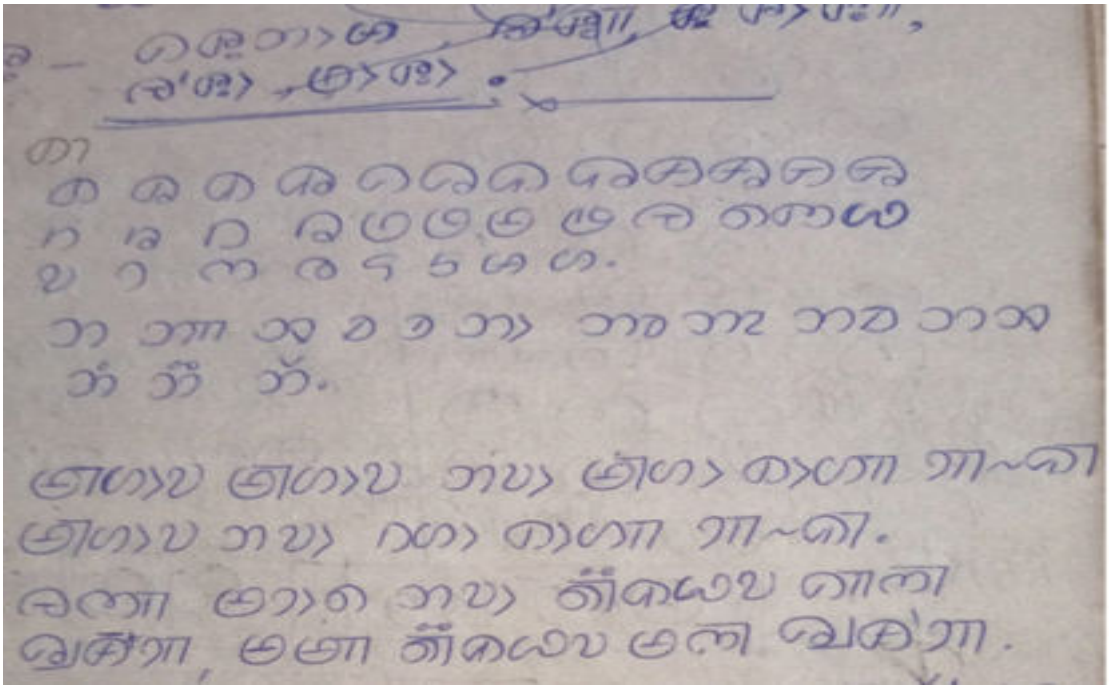

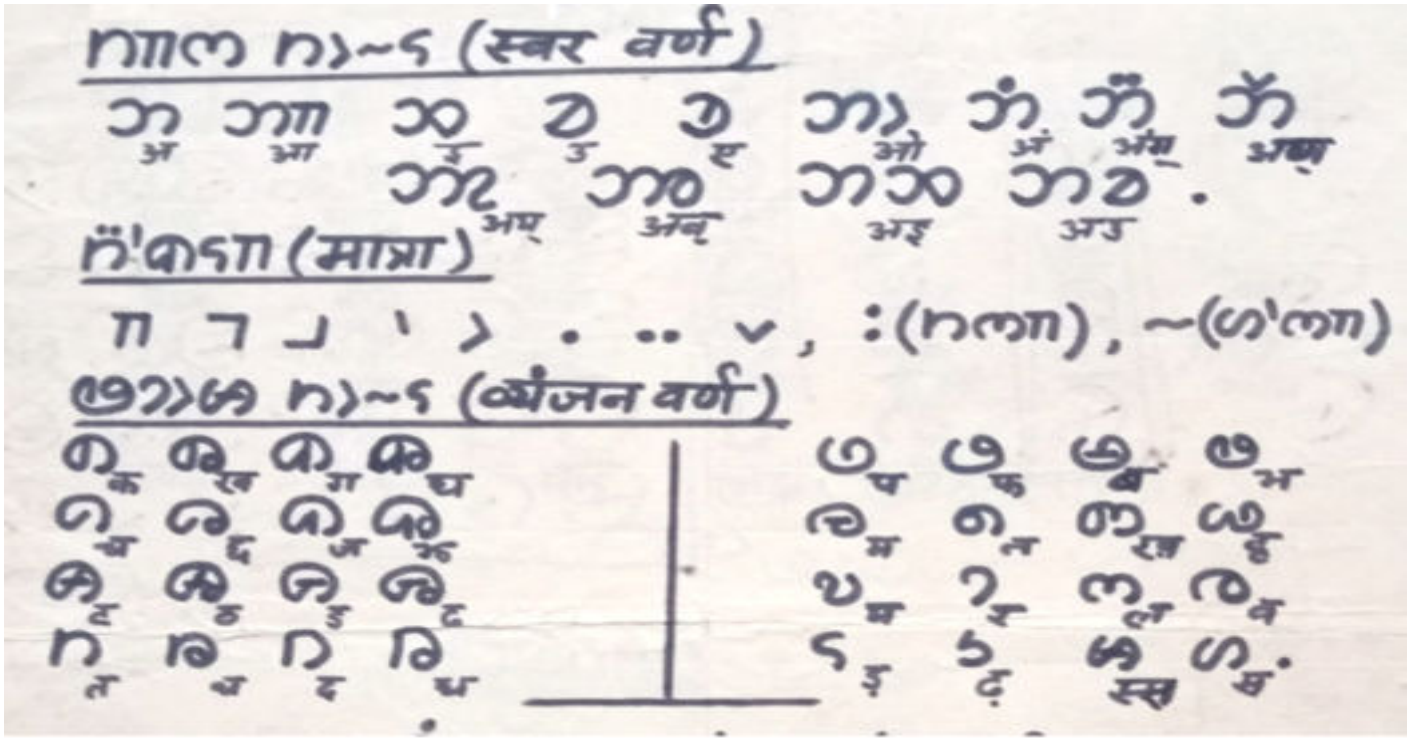

**श्री भुनेश्वर उराँव, अपने पुत्र डॉ0 नारायण उराँव को कागज–कलम में गोल–मोल तथा टेढ़ी–मेढ़ी लकीर खींचते देखकर बोले – बेटा, एन्देर ननना लगदय ? ख़ने तंगदस बाःचस – कुँडुख़ कत्था गे लिपि गढ़आ लगदन। तंगदस गही चिहुँटन एःरर तम्मबस मेंज्जस – इबड़न ने बुझुरओ ? तम्मबस गही कत्थन मेनर तंगदस किरताचस – नीन टूड़ा–बचआ एकसन सिखिरकय। ख़ने बबस गच्छरस – स्कूल नु जुनू सिखिरकन। तम्मबस गही किरताचकन मेनर तंगदस बिड़दाचस – ई लिपि हुँ स्कूल नु टूःड़ना–बचना मनो होले ओरमर सिखिरओर का मला ! कत्थन बुझुर'अर बबस आःनियस – एन्ने मनी, होले दव कुना नना।

श्रद्धेय भूनेश्वर उराँव
(डॉ0 नारायण उराँव के पिता)
ग्राम – सैन्दा, थाना – सिसई,
जिला – गुमला (झारखण्ड)

**श्रीमती फूलमनी उराँव, अपने पुत्र डॉ0 नारायण उराँव को अपने पिताजी के साथ बाद–विवद में उलझते देख सामने आयीं और बोलीं – निंग्गन नेखअय ती हुँ एलेचना मल्ला। निम्बस सम्भड़आ पोल्लोस, होले एःन संभड़ओन ! खोंड़हा गही दव नलख खतरी नीन दव नलखन दव कुना नना। धरमे अरा धरमी सवंग निंग्गन डहरे एःदओ दरा पड़हा समाज अरा पड़हा पंच निंगहय नलखन मुन्दहारे होओ।

दरअसल डॉ0 नारायण की माँ एक सामाजिक कार्यकर्ता थीं और राजी पड़हा, भारत की तत्कालीन उप बेल थीं। जिसके चलते समाज को लोगों के साथ उठने–बैठने से उनको बल मिलता था। डॉ0 उराँव बतलाते हैं कि उनके मजदूर किसान पिताजी मेडिकल कॉलेज में एडमिषन के लिए मना कर दिये थे, क्योंकि मेडिकल का खर्चीला पढ़ाई का खर्च पूरा नहीं कर पाते। इस पर, उनकी माँ ने कहा – नीन कला अउर नाःमे लिखतआ, एःन झरा बीःसा–बीःसा निंग्गन पढ़तोओन। माँ ने अपना वचन पूरा किया और उनका बेटा एम.बी.बी.एस. पढ़ाई पूरा कर डॉक्टर बन गया।

श्रीमती फूलमनी उराँव
(डॉ0 नारायण उराँव की माँ)
ग्राम – सैन्दा, थाना – सिसई,
जिला – गुमला (झारखण्ड)

** वर्ष 1991 में प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र रामगढ़, दुमका में चिकित्सा पदाधिकारी के पद पर कार्य करते हुए – 'हिन्दी दैनिक – 'हिन्दुस्तान', दिनांक 13 अगस्त 1991 पढ़ा गया। समाचार था – डॉ. मुण्डा संयुक्त राष्ट्र पहुँचे – राँची विश्वविद्यालय के पूर्व कुलपति व झारखण्ड आन्दोलन के नेता डॉ. रामदयाल मुण्डा ने अब आदिवासियों के विकास के लिए संयुक्त राष्ट्र का दरवाजा खटखटाया है। दूसरी तरफ भारत सरकार ने संयुक्त राष्ट्र संघ में यह कहा कि उसके यहाँ आदिवासी नामक कोई चीज नहीं है। जेनेवा में आदिवासियों के मुद्दे पर संयुक्त राष्ट्र संघ की बैठक में भाग लेकर वापस लौटने के बाद डॉ. मुण्डा ने यह जानकारी दी। यह समाचार, डॉ. उराँव के मस्तिष्क पर गहरा प्रभाव पड़ा। इस उधेड़बुन में उनके मन में तरह–तरह के प्रष्न उठने लगे, जिसका उत्तर ढूँढ़ने हेतु वे आगे बढ़ते गए और रास्ता निकलता गया। (साभार – सरना फूल, सरहुल विषेषांक, राँची, 25 मार्च 1993 ई0।)

प्रश्न – भारत सरकार की नजर में अगर हम आदिवासी नहीं हैं तो क्या हैं ???

1. क्या, हमारे पूर्वज आर्य हैं ?	उत्तर मिला – नहीं।
2. क्या, कुँड़ुख़ भाषा आर्य भाषा परिवार की है ?	उत्तर मिला – नहीं।
3. क्या, हम हिन्दु (धर्म के अर्थ में) हैं ?	उत्तर मिला – नहीं।
4. क्या, आदिवासी शूद्र है ?	उत्तर मिला – नहीं।
5. हमारी भाषा (कुँड़ुख़), कौन सी भाषा परिवार की है ?	उत्तर – द्रविड़ भाषा परिवार।
6. भारतीय संविधान में हमारी पहचान क्या है ?	उत्तर – अनुसूचित जनजाति।
7. दुनियाँ हमें किन–किन नामों से जानती है ?	उत्तर – Tribe, Indigenous.

(Tribe एवं Indigenous का हिन्दी अनुवाद भी उनके हृदय को स्पर्श नहीं कर पाया और वे अपनी पहचान ढूँढ़ने आगे बढ़े। उन्हें अपनी अन्तर्रात्मा से उत्तर मिला – अपनी भाषा–संस्कृति को दुनियाँ के सामने स्थापित करने की दिशा में आगे बढ़ो और वे आगे बढ़ते गए।)

**अखिल भारतीय कुँड़ुख़ कत्थ जतरा, गुमला, दिनांक 17–18 अक्टूबर 1992 को प्रो0 बेर्नाड मिंज की अध्यक्षता में सम्पन्न हुई। इस जतरा में तीन लिपियाँ समाज के सामने आयीं –

(क) कुँड़ख़ लिपि – श्री सामुएल रंका, 1937 ई0।

(ख) कुँड़ख़ लिपि – फादर बेन्जामिन कुजुर।

(ग) बराती लिपि – डॉ0 अनन्ती जेबा सिंह, 1991 ई0।

इस जतरा में हुए कार्यवाही का संकलन, सरना फूल, पत्रिका के सरहुल विशेषांक के 'हलचल' शीर्षक में प्रकाशित है, जिसमें उल्लिखित मुख्य बातें इस प्रकार हैं –

(क) प्रो० हरी उराँव ने अबतक कुँड़ुख भाषा में उपलब्ध समस्त पुस्तकों एवं लेखकों के बारे में विस्तार से चर्चा की।

(ख) डॉ० बिशप निर्मल मिंज ने डॉ. अनन्ती जेबा सिंह की बराती लिपि के विषय में विस्तार से चर्चा की और बताया कि इस लिपि को कम्प्यूटर ने कुँड़ुख़ भाषा के लिए उपयुक्त बतलाया है।

(ग) श्री महादेव टोप्पो ने प्रतिनिधियों से कहा कि वे विभिन्न लिपियों को जाने, समझें जरूर लेकिन जब भी लिपि के चुनाव की बात आये, सर्वसम्मति से किसी एक को ही स्वीकार करें।

(घ) श्री उपेन्द्र नारायण उराँव ने लिपि समस्या पर बोलते हुए ऐसी लिपि की खोज पर बल दिया जो अधिक वैज्ञानिक, सर्वग्राह्य एवं सर्वमान्य हो। इसके लिए उन्होंने देवनागरी लिपि को काफी हद तक उपयोगी बतलाया।

(साभार – सरना फूल, सरहुल विशेषांक,
प्रकाषन – सरना नवयुवक संघ, राँची, 25 मार्च 1993 ई0। शीर्षक : हलचल।)

** कुँडुख़ कत्थ जतरा, गुमला में लिपि के अग्रेतर विकास हेतु चयनित ''बराती लिपि'' के अध्ययन के बाद पायी गई त्रुटि ने आदिवासी समाज–संस्कृति आधारित विचारधारा वाली लिपि विकास के कार्य को आगे बढ़ाने के लिए *ऑल झारखण्ड स्टूडेन्टस यूनियन (आजसू)* के तत्कालीन वरीय छात्र नेताओं में से श्री विनोद कुमार भगत (अध्यक्ष), श्री प्रभाकर तिर्की (पूर्व अध्यक्ष), डॉ. देवशरण भगत (उपाध्यक्ष), श्री प्रवीण उराँव (उपाध्यक्ष), श्री जयराम उराँव (उपाध्यक्ष), अमर शहीद श्री सुदर्षन भगत आदि द्वारा नई लिपि के विकास हेतु छात्र जीवन में आदिवासी छात्रावास, राँची के अंतेवासी रहे डॉ. नारायण उराँव 'सैन्दा' को आंदोलनकारी छात्रों की ओर से वर्ष 1992 में जिम्मेदारी सौंपी गयी।

– ऑल झारखण्ड स्टूडेन्टस यूनियन (आजसू) के तत्कालीन अध्यक्ष सह छात्र नेता श्री विनोद कुमार भगत।

**लिपि विकास में झारखण्ड अलग प्रांत आंदोलनकारियों का समर्थन :–

डॉ. नारायण उरॉव 'सैन्दा' स्वर्णरेखा आदिवासी कॉलेज छात्रावास, राँची जाया करते थे। 1993 की एक शाम की बात है, डॉ. नारायण, आजसू अध्यक्ष विनोद कुमार भगत से मिलने उनके कमरे पहूँचे। खाना खाने के बाद, दोनों समाज और आन्दोलन के कई गंभीर मुद्दों पर विचार–विमर्श करने लगे। इसी क्रम में विनोद कुमार भगत बोलते–बोलते भावुक हो गये और उनका गला रूंधने लगा। इस पर डॉ. उरॉव ने कहा – आखिर ऐसी कौन सी बात है जो आप रो रहे हैं। आप (आजसू अध्यक्ष) इतने बड़े आन्दोलन का नेता हैं और नेता ही रोये तो आन्दोलन का क्या होगा ? इस पर विनोद कुमार भगत के मुख से निकला – आन्दोलनकारी संगठन में, बुद्धिजीवियों की कमी है। हम किनसे कार्य करायें ? अगर कल के दिन झारखण्ड बनेगा तो सिस्टम वही रहेगा, जो बिहार में है। यानि मंत्री से लेकर संतरी तक और टेक्नोक्रेट से लेकर व्यूरोक्रेट तक वही पुरानी व्यवस्था रहेगी तो फिर यह आन्दोलन किसके लिए हैं। पढ़ा–लिखा वर्ग तो कहीं भी नौकरी या व्यापार कर लेगा। हमारे गाँव–समाज के लोगों को क्या मिलेगा, जो इस आन्दोलन में जूझ रहे हैं। आदिवासी समाज के पास अपनी भाषा है, संस्कृति है, अपना रीतिरिवाज है। अगर आन्दोलन के माध्यम से यह धरोहर बच जाता है तो हम आन्दोलन को सफल मानेंगे। इसके लिए भाषा को बचाना होगा। भाषा बचेगी तो संस्कृति भी बचेगी और भाषा तभी बचेगी जब भाषा की पढ़ाई प्राथमिक स्तर से विष्वविद्यालय स्तर तक होगी। साथ ही यह भी तथ्य है कि आज के भूमण्डलीकरण के दौर में अपनी आदिवासी भाषा को बचाने एवं निखारने के लिए अपनी भाषा की लिपि का होना भी आवष्यक है।

फोटो : झारखण्ड अलगप्रांत आन्दोलन के दौरान आमरण अनषन पर बैठे लालधारी पट्टी में दायें से डॉ0 देवषरण भगत, डॉ0 रामदयाल मुण्डा, श्री संजय बसु मल्लिक एवं श्री बिनोद कुमार भगत।

** नई लिपि का नाम तोलोङ सिकि चुने जाने एवं इसे स्थापित किये जाने में डॉ. नारायण उराँव की परिकल्पना को श्रद्धेय डॉ० बहुरा एक्का, श्रद्धेय डॉ० रामदयाल मुण्डा एवं श्रद्धेय डॉ० बासुदेव बेसरा ने अपने उत्कृष्ट विचारों का बहुमुल्य योगदान दिया।

** तोलोङ सिकि को पहली बार सामाजिक प्रदर्षनी हेतु रखा जाना :–

दिनांक 24 सितम्बर 1993 ई0 को सरना नवयुवक संघ द्वारा आयोजित, करम पूर्व संध्या, के अवसर पर पहली बार जनमानस के अवलोकन हेतु तोलोङ सिकि को राँची कॉलेज, राँची के सभागार में रखा गया।

** तोलोङ सिकि के बारे में पहली बार किसी समाचार पत्र में छपना :–

हिन्दी दैनिक 'आज', दिनांक 07 अक्टुबर 1993 ई0 को *तोलोङ सिकि* के विषय में समाचार पत्र में पहली बार छपा। पत्रकार श्री गिरजा शंकर ओझा द्वारा इस संबंध में विस्तृत समाचार छापा गया।

** डॉ० नारायण उराँव द्वारा लिखित प्राथमिक पुस्तक कुँड़ुख़ तोलोङ सिकि अरा बक्क गढ़न, उषा इन्डस्ट्रीज, भागलपुर (बिहार) से माह जनवरी 1994 में प्रकाशित हुआ। यह पूर्व में 1989 से दिसम्बर 1993 तक हस्त लिखित रूप का छः बार संशोधन के बाद इस रूप में प्रकाशित हुआ। वर्णमाला तैयार करने में कई चुनौतियाँ आयीं –

(क) वर्णमाला के लिए कौन–कौन सी ध्वनियों के लिए चिह्न रखा जाय ?

(ख) मूल ध्वनियों के लिए चिह्नों या आकृतियों का चुनाव कैसे किया जाय ?

इस उपापोह में देवनागरी की लेखन पद्धति के अनुसार वर्णों को सजाया गया, किन्तु ङ, ञ, ष, ष, क्ष, त्र, ज्ञ, श्र, ऋ, ऐ औ आदि संस्कृत–हिन्दी के ध्वनियों के लिए ध्वनि चिह्न नहीं रखा गया, क्योंकि इन ध्वनियों का व्यवहार कुँड़ुख़ भाषा में नहीं होता है। ध्वनि चिह्न के लिए समाज के अन्दर दिनचर्या में किये जाने वाले क्रिया कलापों को आधार मानकर वर्णमाला निर्धारण किया गया। आरंभिक दौर में देवनागरी वर्णमाला के वर्णों में से ङ एवं ञ ध्वनि को संयुक्ताक्षर मानते हुए इन ध्वनियों के लिए अलग से वर्ण चिह्न नहीं रखा गया। समझा गया कि इससे दोहराव होगा। जैसे – क्ष = क + ष / त्र = त + र / ज्ञ = ज + ञ / श्र = श + र आदि। इसी निर्णय पर यह पुस्तक छपा।

** हिन्दी दैनिक 'आज', दिनांक 24 जून 1994 ई0 को कुँड़ुख़ भाषा की तोलोंग लिपि को कम्प्यूटर पर उतारने की तैयारी षीर्षक लेख छपा।

कुँड़ुख भाषाकी 'तोलोंग' लिपिको कंप्यूटरपर उतारनेकी तैयारी

** दिनांक 27 जून 1994, दिन सोमवार को अंगरेजी दैनिक Hindutan Times में यह बड़ी ख़बर छपी।

**मासिक पत्रिका, निष्कलंका, अप्रैल 1995 अंक में तोलोंग सिकि एवं बराती लिपि में तुलनात्मक अध्ययन एवं *बराती लिपि* को कुँड़ुख़ भाषा के लिपि के रूप में अस्वीकार किये जाने की अपील। बराती लिपि को अस्वीकार किये जाने का तथ्य है – यह लिपि, ब्राह्मी, देवनागरी, गुजराती एवं तमिल लिपि (इनमें से तीन आर्य भाषा परिवार की लिपि तथा एक दक्षिण द्रविड़ परिवार की लिपि है) को आधार मानकर तैयार किया हुआ था। जिसके चलते इस लिपि से आदिवासी समाज एवं संस्कृति का प्रतिनिधित्व नहीं होता था।

**आदिवासी भाषा की तोलोंग सिकि लिपि का संशोधित स्वरूप विषय पर आदिवासी बुद्धिजीवियों की विचार गोष्ठी दिनांक 22 जून 1997 को सम्पन्न हुई और संषोधित स्वरूप तैयार किया गया। बैठक में डॉ0 रामदयाल मुण्डा एवं डॉ0 फ्रांसिस एक्का के सुझाव के अनुसार, अन्तर्राष्ट्रीय ध्वनि विज्ञान के सिद्धांत के अनुरूप आसान से कठिन की ओर के मानक के आधार पर वर्णमाला स्थापित किया गया, जिसे आदिवासी बुद्धिजीवियों की विचार गोष्ठी में सर्व सहमति से स्वीकार कर लिया गया। बैठक सत्यभारती, राँची में हुई।

16. जुलाई 1996 को पटना में डॉ0 फ्रांसिस एक्का से साक्षात्कार एवं ध्वनि विज्ञान विषय पर अनुसंशा

नई लिपि विकास के क्रम में मैं (डॉ0 नारायण उराँव) भाषाविद डॉ0 फ्रांसिस एक्का (निदेशक,सी.आई. आई.एल., मैसुर) के साथ बिहार की राजधानी पटना के होटल 'सम्राट' में 27 एवं 28 जुलाई 1996 ई0 को मुलाकात किया। डॉ0 एक्का, ACTION AID नामक संस्था के सेमिनार में आये हुए थे। उनके साथ मैंने कई प्रष्नों पर विस्तृत चर्चा किया। परिचर्चा के दौरान डॉ0 एक्का के विज्ञान, तकनीकी तथा कम्प्यूटर की बातों में मैं उलझ गया। इसी तरह गाँव–समाज की बातों में डॉ0 एक्का भी उलझ गये। मैंने कहा – आदिवासी समाज अपने सभी नेगचार–अनुष्ठान, संस्कार–संस्कृति आदि घड़ी की विपरीत दिशा में सम्मन्न करते हैं। आधुनिक मशीन द्वारा इन बातों को नजर अंदाज किया जाता है। इसलिए नई लिपि संस्कृति आधारित हो। दूसरे दिन, *28 जुलाई* को इन बातों पर फिर नये सिरे से परिचर्चा हुई और प्रकृति विज्ञान आधारित रहस्यों, सामाजिक सह सांस्कृतिक अवदानों एवं भाषा वैज्ञानिक सिद्धातों के आध ाार पर झारखण्ड आन्दोलन को को देखते हुए डॉ0 एक्का ने सुझाव दिया – दुनियाँ में कोई भी लिपि 100 प्रतिषत सही नहीं है तथा दुनियाँ की सभी लिपियाँ, समाज एवं संस्कृति पर आधारित हैं। मानव, सर्वप्रथम बोलना सीखा, उसके बाद लिखना एवं पढ़ना। वर्तमान परिवेष में आदिवासी समाज को भी अपनी भाषा–संस्कृति को संरक्षित एवं सुरक्षित रखने हेतु सामाजिक सह सांस्कृतिक आधार वाली लिपि तैयार करनी होगी। नई लिपि में निम्न प्रकार के गुण होने चाहिए –

डॉ. फ्रांसिस एक्का

(क) नई लिपि, आदिवासी समाज और संस्कृति का प्रतिनिधित्व करने वाला हो।
(ख) नई लिपि, एक ध्वनि, एक संकेत के अन्तर्राष्ट्रीय ध्वनि विज्ञान के सिद्धांत के अनुरूप हो।
(ग) आदिवासी भाषा के सभी मूल ध्वनियों का संकेत चिन्ह हो, संयुक्ताक्षर ध्वनि का नहीं।
(घ) नई लिपि के अक्षर का नाम और ध्वनिमान में समानता हो।
(ङ) International Phonetics Alphabet (IPA) के अनुरूप 6 मूल स्वर पर आधारित हो।
(च) नई लिपि में, लिखने और पढ़ने में समानता होनी चाहिए।
(छ) नई लिपि, लिखने और समझने में आसान तथा सरल हो।
(ज) अक्षर सिखलाने का तरीका आसान से कठिन की ओर होना चाहिए।
(झ) नई लिपि में *phoneme* के लिए ध्वनिचिन्ह होने चाहिए, *allophones* (स्वनिम) के नहीं।
(ञ) नई लिपि, अपने भाषा परिवार के अनुरूप *Sitting Script* समूह के होने चाहिए।
(ट) नई लिपि, वर्णात्मक लिपि हो तथा अधिक से अधिक लिपि चिन्ह का घुमाव दायें से बायें होते हुए दायें की दिशा में बढ़ने वाला हो क्योंकि अधिकतर लोग दायें हाथ से लिखने वाले होते हैं।

डा. नारायण उराँव

पटना में, वर्ष 1996 में डॉ. एक्का से मुलाकात से पहले मैं कई बार पत्र लिखा तथा व्यक्तिगत रूप से भेंट कर बातचीत करने की इच्छा प्रकट की। इसी क्रम में मैं सितम्बर 1994 में एक पत्र लिखा जो उन्हें 30.09.1994 को मिला। इस पत्र के उत्तर में उन्होंने सुझाव दिया कि मैं पटना या राँची आने पर खबर कर दूँगा। 13 जनवरी 1995 को लिखा गया उनका पहला पत्र प्राप्त हुआ। इसी तरह जानकारी मिली कि वे पटना आ रहे हैं। तब मैं पटना जाकर मिला और लिपि विकास में उठ रही समस्याओं के समाधान हेतु मार्गदर्षन प्राप्त किया। डॉ0 एक्का ने सुझाव दिया कि – मैं International Phonetic Alphabet के सिद्धांत पर कार्य करूँ।

दिनांक : 28.07.1996 – डॉ0 नारायण उराँव

** कुँड़ुख़ तोलोङ सिकि अरा बक्क गढ़न, पुस्तक के प्रस्तुति को श्री विवेकानन्द भगत (पूर्व बैंक पदाधिकारी), लोंडरा, सिसई–भरनो, गुमला एवं साथियों द्वारा 1996 में उक्त पुस्तिका में प्रस्तुत वर्णमाला को अपूर्ण मानना तथा गाँव में गाये जाने वाले मौसमी गीतों के माध्यम से, विशेष रूप में करम गीत के माध्यम से सामाजिक, सांस्कृतिक एवं पारम्परिक धरोहरों के संरक्षण हेतु तथा आने वाली पीढ़ी तक पहुँचाने के लिए पारम्परिक अवधारणाओं के आधार पर आवश्यक संशोधन किये जाने के लिए अपील किया गया। श्री भगत जी के सलाह पर वर्णमाला में सुधार हुआ जिसमें वर्णमाला क्रम – क ख ग घ/च छ ज झ/त थ द ध/ट ठ ड ढ/प फ ब भ/म न ख़ ह/य र ल व/स स़ ड़ ढ़ में समीक्षोपरान्त सुधार करते हुए – क ख ग घ ङ/च छ ज झ ञ/ट ठ ड ढ ण/त थ द ध न/ प फ ब भ म/य र ल व ञ़/स ह ख़ ड़ ढ़ का क्रम रखा गया।

स्व० विवेकानन्द भगत
(पूर्व बैंक पदाधिकारी)

17. राजी देवान श्री भिखराम भगत, राजी पड़हा, भारत के नेतृत्व में 3–5 जनवरी 1997 को राजी पड़हा का वार्षिक सम्मेलन, बमनडिहा, लोहरदगा में सम्पन्न हुआ। इस सम्मेलन में डॉ० नारायण उराँव द्वारा प्रस्तावित लिपि, तोलोंग सिकि को कुँड़ुख़ भाषा की लिपि के रूप में उपस्थित समूह ने स्वीकार कर लिया, परन्तु राजी देवान श्री भिखराम भगत एवं श्री इन्द्रनाथ भगत (ततकालीन माननीय सांसद, लोहरदगा) के आपसी विमर्श के पश्चात् निर्देश दिया गया कि लिपि के साथ इसका व्याकरण भी जरूरी है। अतएव व्याकरण के लिए भाषाविदों तथा शिक्षाविदों के साथ मिलकर लिपि के साथ व्याकरण भी तैयार करें और पड़हा के सामने लायें, क्योंकि लिपि की पूर्णता या अपूर्णता तथा इसका आधार विषयक बातों के लिए शिक्षाविदों का मंतव्य मिले तभी इसकी सामाजिक मान्यता पर विचार होगा। यह सुनकर डॉ० नारायण निराश हुए, पर मेहनत से आगे बढ़े और आज कहते हैं – शायद वह ईश्वरीय कृपा थी, जो बाबा भिखराम भगत के मुख से यह सुझाव का शब्द निकला अन्यथा व्याकरण की समझ के बिना लिपि विकास अधुरा ही रहता।

राजी पड़हा महाधिवेशन
ग्राम - ब्राह्मणडीहा, लोहरदगा

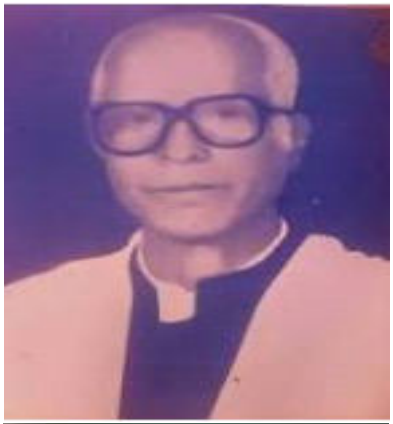

राजी पड़हा देवान
स्व० भिखराम भगत,
राजी पड़हा, भारत

पूर्व सांसद
स्व० इन्द्रनाथ भगत
लोहरदगा, लोकसभा

आदिवासी भाषा की तोलोंग सिकि (लिपि) का आविष्कार

तोलोंग सिकि एक लिपि है। इसे आदिवासी भाषा समूह के साहित्य के विकास हेतु विकसित किया गया है। अब तक इन भाषाओं के साहित्य देवनागरी अथवा रोमन लिपि में लिखे जाते रहे हैं। इन लिपियों में आदिवासी समूह की भाषाओं में उच्चरित ध्वनियों के ध्वनि –चिह्नों का अभाव रहा है। साथ ही इन भाषाओं की प्रकृति अँग्रेजी अथवा हिन्दी भाषा की प्रकृति से भिन्न है जिसके चलते इनके साहित्य का समुचित विकास नहीं हो पाया है।

तोलोंग एक प्रकार का पोशाक है। इसे आदिवासी पुरूष पहना करते हैं। एक पोशाक के अलावे यह एक जनजातीय पहचान का प्रतीक भी रहा है। इसी प्रतीक के विभिन्न स्वरूपों को ध्वनि – चिह्नों के रूप में प्रयोग किया गया है। इसके अतिरिक्त आदिवासी समुदाय के बीच प्रचलित मान्यताओं, परंपराओं एवं दिनचर्या के अनुष्ठानित चिह्नों को भी आधार माना गया है।
इस वर्णमाला में 35 +1 = 36 व्यंजन वर्ण हैं तथा 35 + 1 = 36 स्वरों को मात्र 12 चिह्नों से लिखा गया है।

वर्णमाला के प्रथम अक्षर का घुमाव घड़ी की विपरीत दिशा में रखा गया है। चूँकि आदिवासी परंपरा के सभी क्रिया – कलाप घड़ी की विपरीत दिशा में ही सम्पन्न होते हैं। मशीनी युग में खरा उतरने के लिए इसे सिटिंग स्क्रिप्ट (Sitting Script) के अनुरूप रखा गया है। इसे तेजी से लिखा एवं पढ़ा जा सकता है। इसे उराँव (कुँड़ुख), मुण्डारी, खड़िया, हो, संताली, पहाड़िया एवं नागपुरिया आदि विभिन्न भाषाओं की प्रस्तावित लिपि के रूप में प्रस्तुत किया गया है। यह समाज के लिए बहुत उपयोगी सिद्ध होगा।

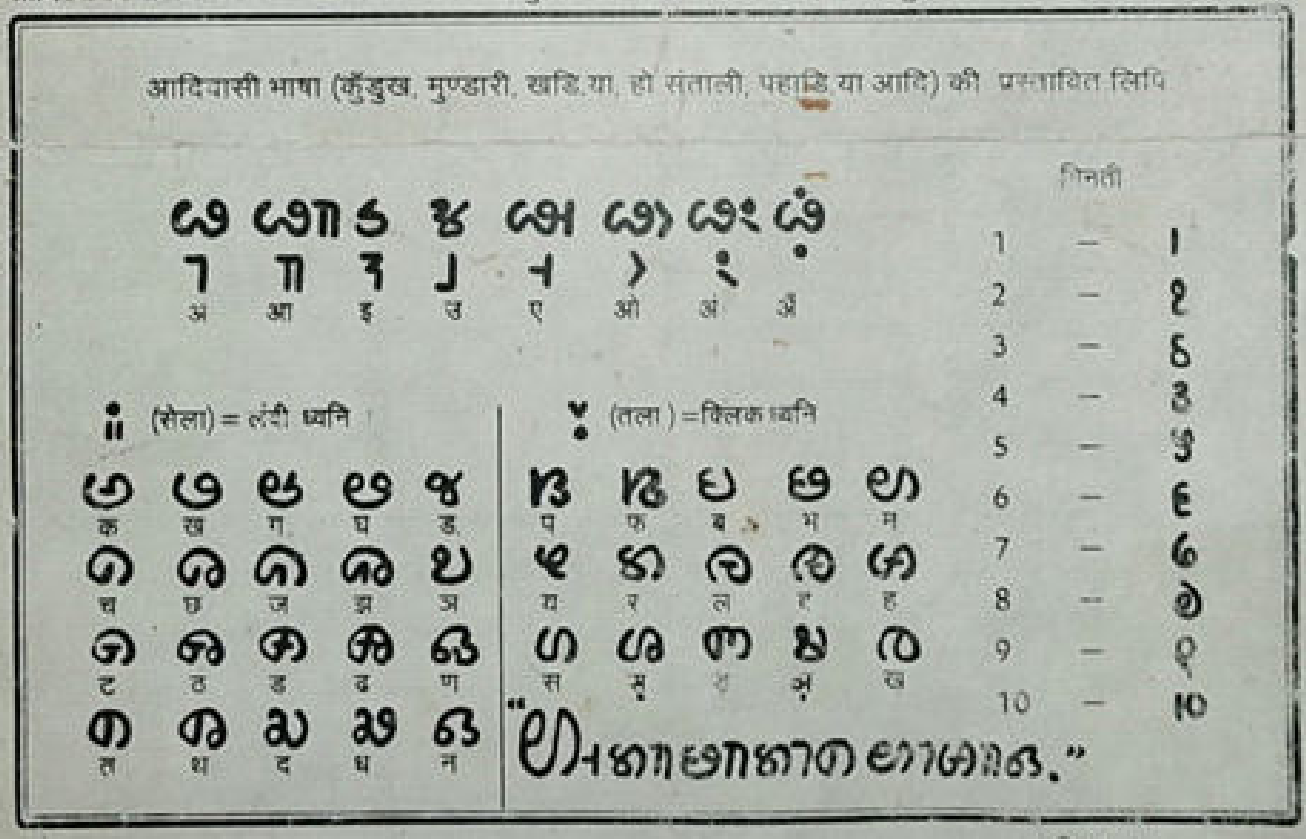

निदेशक–
1.डॉ. विश्वनाथ भगत
अवर निदेशक स्वास्थ्य (अवकाश प्राप्त)
2.डॉ. विष्णु भगत
राँची नगर निगम

3. श्री मनोरंजन लकड़ा
डिप्टी ट्रान्सपोर्ट कमिश्नर (अवकाश प्राप्त)
4. श्री वासुदेव बेसरा
अधिवक्ता, दुमका कोर्ट

आविष्कारक –
डॉ. नारायण उराँव
निरंसिता प्रकाशन
मोरहाबादी रोड
करमटोली चौक, राँची
दिनांक – २२-०३-९७